संपर्क भाषा भारती

साहित्य-समाज को समर्पित राष्ट्रीय मासिकी, मई—2022, RNI-50756

अनुक्रमणिका मई -2022

क्रम सं:	शीर्षक :	लेखक :	पृष्ठ संख्या
1.	**संपादकीय**		**3**
2.	तोप के मुहाने पर खड़ी...	सोनम लववंशी	4-5
3.	बीच की दूरियाँ (लघुकथा)	वीरेंदर वीर	5
4.	यूज़ एंड थ्रो	महेंद्र महर्षि	6
5.	सूख रहा है गाँव का लोकरस	डॉ रामशंकर भारती	7-8
6.	मलहियाँ चोर (कहानी)	प्रद्युम्न कुमार सिंह	9-10
7.	कविता यें	कुबेर मिश्रा	11
8.	ख़ास दोस्त (लघुकथा)	मिन्नी मिश्रा	12
9.	लघुकथाएं	इन्दु सिन्हा 'इन्दु'	13
10.	बिग बॉस (लघुकथा)	अशोक वर्मा	13
11.	राजनीति (लघुकथा)	मोहन राजेश	14
12.	कविता	विजय कनोजिया	14
13.	कविता	अनुपमा अनुश्री	15
14.	लघुकथाएं	विजय कुमार	15
15.	स्मृति शेष	दिलीप कुमार	16-20
16.	यूँ तो नज़र	व्यग्र पाण्डेय	21
17.	कविता	इन्दु सिन्हा 'इन्दु'	21
18.	पेंटर : बीती बातें	ब्रजेश श्रीवास्तव	22
19.	कविता	लाल देवेंद्र कुमार श्रीवास्तव	22
20.	कविता	साधना मिश्रा	23
21.	कविता	सौरभ जयंत	23
22.	आस्माँ तले (लघुकथा)	नीना सिन्हा	24
23.	दोहे	आशा खत्री 'लता'	24
24.	कॉलबेल (कहानी)	रामानुज अनुज	25-26
25.	गीत	शिव कुमार बिलगरामी	27
26.	कुंडलियाँ	अशोक जैन	27
27.	कवितायें	शिवानंद सिंह 'सहयोगी'	28-29
28.	कविता	राजेश सिंह	30
29.	कविता	तृप्ति मिश्रा	31
30.	निशाने बाज़ी : मानवी	चन्द्रकान्त पाराशर	31
31.	कविता	जया रावत	32

प्रिय समस्त पाठकगण,

संपर्क भाषा भारती का प्रकाशन वर्ष 1991 में लगभग इसी काल में प्रारम्भ किया गया था। पत्रिका आरंभ से ही हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं के सृजनात्मक पहलुओं पर केन्द्रित रही है। आज, इकत्तीस वर्ष बाद भी पत्रिका का केंद्र-बिन्दु हिन्दी साहित्य ही है। इसमें कुछ सामाजिक तथा अंतर्राष्ट्रीय विषयों का अवश्य समावेश हुआ है। हाँ! पूर्व में जब पत्रिका का आरंभ हुआ था तो पत्रिका का पाठक वर्ग विशेषकर सरकारी उपक्रमों या फिर सरकार से हिन्दी भाषा से सम्बद्ध कर्मचारीगण भी थे। यही कारण है कि पत्रिका ने लंबे अरसे तक भाषाई विशेषकर हिन्दी की संरूपता के क्षेत्र में काम किया।

वर्ष नब्बे के दौर में कंप्यूटर पर हिन्दी की उपलब्धता शून्य थी।

प्रेस और प्रिंटिंग का अधिकांश कार्य हाथ की टाइप सेटिंग से हुआ करता था। कम्प्यूटर टाइप सेटिंग के प्रयोजन केलिए विशेष मशीनें हुआ करती थीं जिनसे गैली प्रूफ प्राप्त हुआ करता था।

आज की तरह कम्प्यूटरों पर हिन्दी टाइप की सुविधा उपलब्ध न थी। इसकेलिए विशेष सॉफ्टवेर खरीदना पड़ता था जिंका मूल्य उस समय के लिहाज से 30 से 40 हज़ार रुपये हुआ करता था। इन पैकेजों को तैयार करने वाली सॉफ्टवेर कंपनियाँ भी बहुत ही न्यून संख्या में थीं।

परिचय

चूंकि, मुझे सरकारी संस्थान में हिन्दी के कार्य क्षेत्र में काम करने का मौका मिला और मैं पत्रकारिता और इस स्व-प्रकाशन से भी जुड़ा रहा इस अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि आज के समय में कंप्यूटर पर हिन्दी की उपलब्धता गत समय से हज़ार गुणे बेहतर है।

आज हिन्दी की स्थिति हर क्षेत्र में 1980-90 के काल से बहुत दुरुस्त है।

उस दौर में मोबाइल फोन नहीं थे, बहुत आवश्यक स्थिति केलिए पेजर हुआ करते थे।

सरकारी कार्यालयों में हाथ से टाइपिंग की जाती थी। आगे चल कर उसका स्थान इलेक्ट्रोनिक टाइपराइटर ने ले लिया।

कंप्यूटर और मोबाइल पर हिन्दी की उपलब्धता ने हर भाषा में लेखन की दिशा में क्रांति ला दी। इन उपकरणों की मदद से अब हर व्यक्ति लेखक बन गया। आगे चलकर इंटरनेट ने सोशियल मीडिया को जिस तरह गति दी उसने तो अद्भुत कारनामा कर दिया।

इस विषय को यहीं विराम देता हूँ।

पत्रिका की तीन से अधिक दशकों की यात्रा पर चर्चा जारी रहेगी।

संपर्क भाषा भारती पत्रिका के मई-2022 के अंक को आपको सुपुर्द करता हूँ।

आप पत्रिका से हर प्रकार से जुड़ेंगे तो हमें प्रसन्नता होगी।

एक बात और, पत्रकारिता से सम्बद्ध/इच्छुक पाठकगण **https://www.newzlens.in** से भी जुड़ सकते हैं। यह पोर्टल भी समाचार/साहित्य को समर्पित है।

पत्रिका से जुडने उसमें सहभागिता केलिए आपके सुझावों का हार्दिक स्वागत है। अप अपने विचारों से हमें अवश्य अवगत कराएं, हमारा ईमेल samparkbhashabharati@gmail.com है।

सादर,

सुधेन्दु ओझा

पत्रिका में प्रकाशित लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली110092

तोप के मुहाने पर खड़ी मानव सभ्यता और कमजोर पड़ते मानवीय मूल्य

सोनम लववंशी

साहिर लुधियानवी की एक नज़्म है कि, "ख़ून अपना हो या पराया हो; नस्ल-ए-आदम का ख़ून है आख़िर। जंग मशरिक़ में हो कि मग़रिब में, अम्न-ए-आलम का ख़ून है आख़िर।।" वर्तमान दौर में ये पंक्तियां एकदम सटीक बैठती हैं, क्योंकि जिस दौर में आज हम जी रहें हैं या कहें मानव सभ्यता जिस तरफ बढ़ रही है। उस मौजूदा हालात को देखकर यही अंदेशा लगाया जा रहा है कि दुनिया तीसरे विश्व युद्ध की तरफ़ बढ़ रही है। दुनिया में अमन चैन जैसे शब्द अब बेमानी से लग रहे हैं। अभी चंद समय पहले ही दुनिया कोरोना जैसी वैश्विक महामारी के भयाभय दौर से गुज़री है। एक ऐसी महामारी जिसका कोई इलाज़ नहीं, चंद पलों में ही लोगो ने अपनो को दम तोड़ते देखा है और ये किसी एक राष्ट्र की तस्वीर नहीं थी, बल्कि सम्पूर्ण विश्व में इस महामारी के चलते जो मौत का तांडव हुआ उसे भला कौन भूल सकता है? देखा जाए तो इस महामारी के ज़ख्म अभी भरे भी नहीं है कि दुनिया तीसरे विश्व युद्ध की तरह बढ़ चली है। कोरोना महामारी ने विश्व को यह आईना जरूर दिखाया कि भले भी कोई देश कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो? भले ही परमाणु बम और अणुबम पर इतरा लें और महाशक्ति होने का गुमान क्यों न हो? लेकिन जब कोई महामारी मौत बनकर आती है। फिर 2022 में भी उसे सहजता के साथ टाला नहीं जा सकता है। इतना ही नहीं कोरोना काल में न सिर्फ अर्थव्यवस्था के पहिये लड़खड़ाये, बल्कि उल्लेखनीय बात है कि इस दौरान इंसान तक का मनोबल डगमगा गया। लोग डर के माहौल में जीने को मजबूर हो गए, लेकिन इस दौरान की जो एक विशेष बात रही। वह ये थी कि इस दौरान प्रकृति ने अपनी प्रवृत्ति नहीं बदली। ऐसे में दुनिया योग, प्राणायाम व शाकाहार की तरफ बढ़ी और आज इसी से प्रेरणा लेकर अमेरिका ने भी अपने 40 विश्व विद्यालयों में 'अहिंसा परमो धर्मा:' का संदेश देते हुए सात्विक आहार से जुड़े पाठ्यक्रम को संचालित करने का निर्णय लिया है। जो न केवल कर्णप्रिय और सुकून देने वाला है, बल्कि एक सराहनीय पहल भी है। भले ही यह बहुत छोटी पहल हो पर अमेरिका जैसे देश का अहिंसा के प्रति झुकाव कई मायनों में अहम हो जाता है। पर मानव अपने स्वार्थ को त्याग दे यह भला कहाँ तक सम्भव है? आज यह कौन नहीं जानता कि युद्ध भले ही रूस और यूक्रेन के बीच चल रहा हो, लेकिन इस युद्ध में अमेरिका का योगदान भी कम नहीं है। यूक्रेन को युद्ध के लिए उकसाने का काम अमेरिका ने ही किया है। इस युद्ध के अपने कई मायने है और इतना ही नहीं सबके अपने-अपने स्वार्थ भी है, लेकिन क्या युद्ध किसी भी समस्या का समाधान हो सकता है? नहीं ना!

गौरतलब हो कि दूसरी तरफ वर्तमान दौर में समूचा विश्व ग्लोबल वार्मिंग जैसे वैश्विक संकट को झेल रहा है। जिसका परिणाम आए दिन भूकम्प, बढ़ते जल संकट के रूप में सामने आ रहा है। इंसान स्वच्छ हवा-पानी तक को तरस रहा है। तो वहीं कोरोना का संकट भी अभी टला नहीं है। आए दिन नये-नये वेरिएंट लोगो पर मौत बनकर मंडरा रहे हैं। पर हमें इन सब बातों से भला कहाँ फर्क पड़ने वाला है? हमें तो आधुनिकता का नंगा नाच जो करना है। नित नए प्रयोग करना है, अणुबम बम से लेकर परमाणु बम तक का परीक्षण करना है। विश्व शक्ति बनना है। ऐसे में सर्वश्रेष्ठ बनने की चाहत में हम अपने ही विनाश की इबारत लिख रहे हैं। इसमें समूचा विश्व बढ़-चढ़ कर हिस्सा ले रहा है। आज भले ही हम अपनी तकनीकी पर इतरा ले लेकिन आने वाली पीढ़ी को हम बारूद के ढेर पर बैठा रहे है। हमें समझना होगा कि मानव मात्र की भलाई अणुबम और परमाणु बम पर नहीं बल्कि सत्य, अहिंसा और दयाभाव पर टिकी हुई है। इसे केवल पाठ्यक्रम तक सीमित नहीं रखा जाना चाहिए। बल्कि हर मानव का यही धेय्य होना चाहिए कि उनके मन में दया और करुणा हो। लेकिन वर्तमान परिदृश्य को देखकर तो यही लगता है जैसे दो देशों का युद्ध महज़ समूचे विश्व के लिए मनोरंजन का साधन बन गया हो। किसी के दुःख दर्द को देखकर मानव संवेदना जैसे मर सी गई हो। दुनिया में भुखमरी, कुपोषण पर चर्चा हो न हो लेकिन किस देश के पास क्या और कितने हथियार है, कितने बम मिसाइल है इसकी चर्चा जोरों से शुरू हो गई है। ऐसे में हमें समझना होगा कि एक भूखे इंसान को हथियार नहीं बल्कि पेट भर अनाज चाहिए। अणुबम और परमाणु बम पर बैठकर अमन चैन की आस करना बेमानी है।

देखा जाए तो दुनिया में यूं तो समय-समय पर कई युद्ध लड़े गए। खून की नदियां बहा दी गई ,परमाणु हथियारों तक का प्रयोग हुआ। पर इन युद्ध से किसका भला हुआ? युद्ध के केवल दुष्परिणाम ही सामने आते है। रूस यूक्रेन युद्ध भी कुछ समय के बाद थम जाएगा, लेकिन इस युद्ध में जिन लोगो ने अपनो को खोया है क्या उसकी भरपाई की जा सकेगी? प्रकृति के प्रदूषण को हम युद्ध के कारण पल भर में कई गुणा बढ़ा देंगे क्या उसको कम कर सकेंगे? कीव जो कि यूक्रेन की राजधानी है। आज जहरीले हवा का गुब्बारा उसके आसमान में घूम रहा है। ऐसे में सवाल कई हैं, लेकिन प्रभुत्व की लड़ाई ऐसी है जिन्हें हम देखकर भी अनदेखा कर रहे हैं। आज नहीं तो कल हमें इसके दुष्परिणाम भुगतने ही होंगे। तब कोई हथियार कोई असलहा- मिसाइल काम नहीं आएगी। आंकड़ो की बात करें तो 2020 में भारत सैन्य खर्च के मामले में अमेरिका और

चीन के बाद तीसरा सबसे बड़ा देश बन गया है। फिर भी आए दिन पाकिस्तान और चीन अपनी गिद्ध दृष्टि गड़ाये हुए है। भले ही पाकिस्तान में भुखमरी चरम पर हो लेकिन वहां की सरकार हथियार खरीदने में कोई कंजूसी नहीं करती है। भारत में अशांति फैलाने के लिए इन हथियारों का प्रयोग करती रहती है। वैसे यह पाकिस्तान को तय करना है कि उसके देश वासियों के लिए रोटी जरुरी है या फिर हथियार। वहीं अब कई देशों ने अपनी सैन्य ताकत बढ़ाने के लिए अपना सैन्य बजट बढ़ाने की तैयारी कर ली है, जिसमें जर्मनी ने अपना सैन्य बजट 47 अरब यूरो से बढ़ाकर 100 अरब यूरो कर दिया है। ऐसे में समझ सकते हैं कि दुनिया अब अपने बच्चों को शिक्षा देने से ज्यादा हथियारों को इकट्ठा करने पर उतावली है। फिर मानव सभ्यता और उसके मानवीय मूल्य कहाँ टिकेंगे? यह अपने आपमें बड़ा सवाल है।

ऐसे में निष्कर्ष स्वरूप यह कहें कि आज हर देश की सम्पन्नता का पैमाना बदल गया है, तो यह अतिश्योक्ति नहीं और अब जिस देश के पास जितना ज्यादा हथियार है। वह देश उतना ही शक्तिशाली माना जाने लगा है। दो देशों के युद्ध में समूचा विश्व अपना नफ़ा नुकसान तलाशने लगता है। उसे कोई फर्क नहीं पड़ता कि युद्ध के परिणाम क्या होंगे? कितने निर्दोष लोगों की जान चली जाएगी? लोग बेघर हो जाएंगे। मानव की प्रवृत्ति भी कितनी अजीब है कि कभी एक छोटे जीव की हत्या पर विश्व भर में कोहराम मचा देते है। आंदलोन की बाढ़ लग जाती है, लेकिन आज कोई देश आगे बढ़कर यह पहल करना ही नहीं चाहता कि युद्ध थम जाए। ऐसे में सवाल तो वैश्विक स्तर के संगठनों और महाशक्ति का दम्भ भरने वाले देशों पर भी है, लेकिन ये मानव प्रवृत्ति जो न करा दें। वह कम है, लेकिन अंतिम सत्य यही है कि युद्ध से किसी देश के संसाधनों पर कब्जा किया जा सकता, न कि वहां के लोगों के दिल जीते जा सकते। ऐसे में युद्ध और उसमें इस्तेमाल होने वाले उपकरणों से सृष्टि विनाश की तरफ ही बढ़ेगी, लेकिन यह समझने को तैयार कौन है। सवाल तो यही है, वरना महाशक्ति बनने की होड़ तो सबमें है।

लघुकथा

बीच की दूरियां

एम्बुलेंस सीधी 'एम्स' के आपातकालीन द्वार पर जा खड़ी हुई। शीघ्र ही मैंने ड्राइवर के सहयोग से लगभग अचेत; अपने पिता को 'इमरजेंसी वार्ड' में एक ख़ाली बैड पर पहुँचाया, और कुछ ही मिनटों में नर्स ने वार्ड बॉय की मदद से ज़रुरी औपचारिकताओं के बीच ऑक्सीजन सपोर्ट शुरू कर दिया। वहाँ उपस्थित डॉक्टर ने भी जल्दी ही 'पीछे के कागज़' देखने के साथ पिता की जांच शुरू कर दी।

. . . करीब घँटे भर पहले सिविल अस्पताल से एम्स के लिए रैफर करवा कर लाते समय; ड्राइवर द्वारा एम्बुलेंस को तीव्र गति से दौड़ाने के बाद भी मुझे लग रहा था, जैसे एम्बुलेंस में लेटे पिता की साँसों के साथ 'एम्स' का रास्ता बहुत दूर होता जा रहा है। यहाँ पहुँचने के बाद मन थोड़ा शांत था। दिमाग़ में तनाव के बावजूद मन में एक संतुष्टि थी कि आज इस कठिन समय में, मैं पिताजी के पास था।

बचपन से ही मैं पिता के बहुत करीब था। शैक्षिक काल से नौकरी के बीच शायद ही कोई ऐसा निर्णय या कार्य होगा जो बिना उनके सहयोग के हुआ हो। इस में थोड़ा व्यवधान वैवाहिक जीवन के बाद की व्यस्तताओं और आर्थिक स्थितियों से अवश्य पड़ा, पर फिर भी मैंने उन्हें कभी निराश नहीं किया। और शायद पिताजी ने भी मेरी इच्छाओं को ही अपनाकर जीना. . . .!

"इनके साथ कौन है?"

"जी मैं, मैं हूँ इनके साथ। डॉक्टर की आवाज के प्रत्युत्तर में; मैं अपने विचारों से बाहर निकल डॉक्टर के सामने जा खड़ा हुआ।

"इन्हें, डायबिटीज तो नहीं है।"

"जी नहीं !"

"किडनी रिलेटेड या और कोई सीरियस प्रॉब्लम. . .!" मेरी ओर नजरें टिकाए डॉक्टर पूछ रहा था।

जी, शायद नहीं ! ऐसी कोई गंभीर बीमारी तो कभी नहीं रही इन्हें।"

"शायद. . .!" डॉक्टर थोड़ा असमंजस से भर गया। "क्या लगते हैं आप इनके?"

"जी, मेरे पिता है।"

"कैसे बेटे हो? अपने पिता की बीमारियों का भी नहीं पता।"

"जी वो. . .!"

"कब से छोड़ रखा है अपने पिता को?" डॉक्टर के शब्द टूटे कांच की तरह छन से मेरे मन से आ टकराए। "इनकी मेडिकल रिपोर्टस में पिछले दो साल से इन्हें 'एट्रियल फिब्रिलेशन' (अनियमित दिल की धड़कन) और फैटी लिवर-प्रॉब्लम से पीड़ित दिखाया हुआ है!" कहते हुए डॉक्टर ने रिपोर्ट पेपर मेरे हाथ में थमा दिए।

हाथों में पकड़ी ओल्ड एज होम रिपोर्टस में पिता की इच्छाओं के कई धुंधले अक्स गर्दिश कर रहे थे, मानो कह रहे हों. . ."बेटा! यहां तक लाने में तूने कुछ घँटे नहीं, वर्षो लगा दिए हैं।

विरेंदर 'वीर' मेहता
लक्ष्मी नगर, दिल्ली -110092.
+ 0 9818675207

यूज एण्ड थ्रो

महेन्द्र महर्षि

81 वें साल के पड़ाव से गुजरते हुए अक्सर मैं आगे देखने के साथ, कभी अपनी कुर्सी पर विचार शून्य सा बैठा पीछे की ओर देखा करता हूँ। मुझे मालूम नहीं कि मेरे सरीखे उम्रदराज़ लोगों का इस बारे में अनुभव क्या है।

मेरी मेज़ पर चौड़े मुख की एक ख़ाली बोतल रखी है। यह मेरा कलमदान है। इसमें एक कैंची, कुछ पेंसिल और उनका शार्पनर, पेपर कटर , स्टेपलर आदि आदि , लिखने लिखाने से संबंधित चीज़ें धरी हैं। इस पिटारे में कुछ तरह तरह के ,स्टेनलेस स्टील टिप वाले या वाटरप्रूफ़ पिग्मेंट इंक के कई पैन हैं। 1991 वें में मैं वाशिंगटन के नासा म्यूज़ियम से ऐसे पैन भी लाया था जिनकी स्याही 100 बरस तक नहीं सूखेगी, ये भी यहाँ हैं। कुछ पैन ऐसे हैं जिनकी स्याही ख़त्म हो गई लेकिन इस लिए कूड़े दान में नहीं डाले गए हैं। मेरा उनसे संवेदनात्मक जुड़ाव है। नतीजा यह है कि जब मुझे लिखने की ज़रूरत होती है तो इस भीड़ में चालू पैन ढूँढने पर बार-बार सूखे पैन हाथ में आते हैं। मैं झुंझला उठता हूँ।मुझे लगने लगता है कि "यूज एण्ड थ्रो" का अमरीकी या जापानी फ़ार्मूला मुझे भी अपना लेना चाहिए।लेकिन दूसरे ही पल बड़ों के दिए वे संस्कार मेरा हाथ पकड़ लेते हैं जिन्हें मैं अब भी आदर्श मान कर भूल नहीं पाया हूँ।

जब देश आज़ाद हुआ, मैं आयु के सातवें वर्ष में था। उस उथल-पुथल के दौर में कस्बाई नगरों के म्यूनिसिपल प्राइमरी स्कूल , जैसे तैसे बच्चों को दाख़िला देकर दो दो पारियों में चल रहे थे।अजमेर के गांधी भवन में सुबह हिन्दी स्कूल और दोपहर की पारी में शरणार्थी बच्चों के लिए सिंधी स्कूल लगता था। मैं उम्र के लिहाज़ से बड़ा हो गया था।साल बचाने के लिए मेरा दाख़िला सीधे तीसरी क्लास में करवाया गया। यों तो उन दिनों बच्चों को पीली खड़िया से पुती लकड़ी की पट्टी पर कखग या १-२-३-४ लिखना सिखाया जाता था, मगर मैंने यह स्लेट पर ही सीखा।

अधिकतर गणित या हिन्दी सुलेख के लिए स्लेट का इस्तेमाल होता।होमवर्क पूरा करने केलिए कापी -और निब वाले होल्डर का प्रयोग किया जाता जिसे बार बार स्याही में डुबो कर लिखना होता। उन दिनों स्कूल में भी हर डैस्क पर एक दवात होती थी। इनमें हर सुबह नीली स्याही भरी जाती। होल्डर बच्चे घर से लाते थे। लिखने के निब भी दो तीन तरह के होते। लेखन सुधार और भाषा की ज़रूरत के अनुसार उन्हें होल्डर में बदल लिया जाता था।हम बच्चे अतिरिक्त निब ज्योमेट्री बक्स में सुरक्षित रखते।

अक्सर होता कि क्लास में तीन चार या कभी-कभी एक डैस्कबैंच पर जगह से ज़्यादा छात्रों

को ठूँस कर बैठा दिया जाता। अगर कोई झटका लगा तो स्याही से लबालब दवात छलक जाती और कपड़े, कापी किताबें भी रंगीन हो जाते। इसके लिए बच्चे ही सजा पाते।

मुझे याद आते हैं वे दिन जब, हर चीज़ की क़ीमत और उससे जुड़े हिफ़ाज़त भाव की बड़ी क़द्र की जाती थी। अक्सर लकड़ी का वह होल्डर चटख कर बेकार हो जाता। निब भी घिस जाता। कभी यह भी होता कि होल्डर ज़मीन पर ऐसे गिरता कि निब मुड़ जाता। मुड़ा निब ठीक करने पर काग़ज़ फाड़ डालता। ज़्यादातर वह बेकार ही हो जाता। तब बहुत दुख होता।

उन दिनों का आदर्श यह था कि टूटा हुआ होल्डर हो या निब , फटी हुई किताब-कापी या शिक्षा से जुड़ी कोई सामग्री, उसे कूड़े में नहीं फेंका जाए।उसे आदर से माथे लगाकर, किसी पेड़ के नीचे ऐसे रखा जाता कि उसे पाँव न लग पाएँ। वह पैरों में न आए। ऐसे ही अगर कोई किताब-कापी हाथ से छूट कर ज़मीन पर गिर गई तो उसे भी तुरंत माथे लगाया जाता। यहाँ तक था कि अख़बार या कोई भी लिखित काग़ज़ या मैगज़ीन पर पाँव पड़ जाता तो उसे भी माथे लगा ऐसी जगह रख देते जहां विद्या की देवी सरस्वती का अपमान न हो।

अब समय और जीवन के मूल्य बदल गए हैं। आदर की जगह तुच्छता और तिरस्कार भाव बढ़ा है।कापी किताब अब साध्य नहीं रहे, वे साधन हो चुके हैं।

मैंने बात अपनी मेज़ पर रखे पैन वाले डब्बे से शुरू की थी।आज मुझे फ़ाउण्टेन पैन की यादें भी आ रही हैं। बचपन में बड़े कौतूहल से , मैं बड़ों की जेब में पैन देखता तो मुझे बहुत रीस आती। सोचता, मेरे पास भी ऐसा पैन होना चाहिए।

आठवीं पास कर बतौर इनाम मैंने पिताजी से पैन दिलाने की ज़िद की।मेरे पहले फ़ाउण्टेन पैन का ब्राण्ड नेम "पैरट" था।छींटदार हरे रंग के पैन के ढक्कन पर सुनहरी क्लिप गोल घूमी हुई थी जो जेब के उपर से झांकती यह बताती कि मेरी जेब में भी 'फ़ाउण्टेन पैन' है।

उन दिनों मामूली चीजों का नशा भी सिर चढ़ कर बोलता। याद करता हूँ तो लगता है कि कैसे छोटी छोटी ख़ुशियों का मज़ा तब मुँह में घुल रही लेमनचूस की गोली की तरह आया करता था।

आज जब लिखते हुए कोई पैन रुक जाता है तो यह अहसास होता है कि अब इसे फेंकना होगा। दूसरे पल यह भी सोचता हूँ कि जिस शिद्दत से इसने मेरे विचारों का लेख बना दिया है, उसका वजूद तो उसी से है। इस ख़्याल के आते ही मैं सूख चुके बालपैन को फिर डब्बे में धर लेता हूँ।

यदाकदा लगता है कि मैं क्यों इस भौतिक पैन की क़द्रदानी ढोने में लगा हूँ जबकि संसार में लोग रिश्ते भी अपना मतलब पूरा करने तक के लिए निबाहते हैं। काम निकल जाने पर लोग अपनों को भी "यूज एण्ड थ्रो" वाले सामान की तरह पीछे छोड़ आगे निकल लेते हैं।

अब होल्डर-निब का वक्त शेष नहीं। ज़माना क़लम की टिप पर लगे "बौल नुमा छर्रे" पर सवार, तेज़ी से दौड़ता , "यूज एण्ड थ्रो" का चल रहा है।

दूरदर्शन अपार्टमेंट, गुडगांव

गाँव की डायरी :

सूख रहा है गाँव का लोकरस

डा.रामशंकर भारती

पिछले दिनों कुछ ऐसा सुखद संयोग बना कि अपने सुरीलों के गाँव क्योलारी (जनपद जालौन उत्तर प्रदेश) में हफ्ते भर रहने का सुअवसर मिला।शहर की तमाम बंदिशों से थोड़ा ही सही मगर आराम तो मिला। न दूध - पानी की चिंता न सब्जी - भाजी के लिए भागमभाग। गाँव में बस आराम ही आराम।भिनसारे तड़के उठा और चला गया गाँव से खेतों की ओर जाती धूलभरी सर्पाकार पगडंडी के पीछे - पीछे। गाँव से निकलकर हरे - भरे खेतों की ओर कब आ गया , पता ही नहीं चला। दूर खड़े हरेभरे पेड़ों की छतों से लाल - लाल गोल - मटोल सूरज धीरे - धीरे धरती पर उतर रहा था। मानो कोई बड़ी लाल गेंद लुढ़कती आ रही हो। बरसों से जिन पंछियों को देख नहीं पाया था। वे सब सवेरे - सवेरे कलरव कर रहे थे। भैरवी में प्रभाती गा रहे थे। चारों ओर पक्षियों की मदमस्त सुरीली आवाजों की अलापचारी गूँज रहीं थीं। कोयल की बाँसुरी - सी कुहुक जलमुर्गियों की सारंगी धुन , कबूतरों की गुटरगूँ की तालबंदी , मोरों के नर्तन से नंदन कानन जैसा संगीताना समाँ बाँध रखा था। गाँव की विभोर करती भोर के सौंदर्य को ठगा - सा देखता रह गया। काश ! गाँव की यह सुहानी सुखद सुबह हमारे ठूँठ होते शहरी मन को अपनी अमृतीगंध से यों ही सुवासित करती रहे । सूखे - रीते - आधे - अधूरे दिलों में माटी की कस्तूरी सुगंध भरकर तरोताजा करती रहे।हम प्रकृति से , नदी - ताल - पोखर से , पीपल - बरगद , नीम , आम , महुआ से जुड़े रहें। आँचलिकता को आँचल में सहेजे रहें। भले ही शहर में रहें पर लोकजीवन को जीते रहें । अपनी स्मृतियों की पोटली गाहे - बगाहे ही सही , खोलें जरूर। ऐसा करके हम अपनी लोकसंस्कृति की , लोकसंस्कारों की और लोकरस की भी रक्षा कर सकेंगे।

गाँव से शहर में लौटने विवशता भले ही हो एक बँधी - सी जिंदगी के ढर्रे में जीने के लिए परंतु गाँव से अपने साथ शहर ले जाने को बहुत कुछ है । सो मैं अपने साथ ले आता हूँ कुछ चुभते दर्द , कुछ टीसें जो गाँव से शहरी होने वाले लोगों को जरूर सालती हैं, दुख देती हैं।

गँवई माटी की ममता भरी छुअन का सुख मन को अद्भुत चैन देता है । यह विलक्षण आत्मरस गाँव की सदानीरा से समाप्त हो न जाए , इसकी चिंता खाए जा रही है । गाँव के कुँओं के पानी में मानो बरसों की प्यास बुझाने की कुब्बत आज भी जवान दिखायी पड़ती है। मगर अपनी उपेक्षा के

कारण कुँए अब उदास हैं। अब पनघट पर नयी - पुरानी पनहारिनें भी घूँघट में बतयातीं नहीं हैं। चूड़ियों की मिठबोली खनक गायब है । पनघट उजड़ गये हैं। कुँओं की जगह हैंडपंपों ने ले ली है , जो अक्सर स्वयं प्यासा रहता है और जो स्वयं प्यासा है , वह भला कैसे किसी की प्यास बुझा सकता है ? गाँव के चौखट्टों से नीम - बरगद ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलते।सघन छाँव का घोर संकट है। हाँ , एक चीज अभी भी जरूर गाँव में जिंदा है वह है आपसी मेलमिलाप। जो लंबी दूरियों होने नहीं देता। एक भलमनुसाइत अभी भी गाँव में साँसें ले रही है । ईश्वर करे ये श्वासें अक्षय बनी रहें । कभी समाप्त न हों ।

यों तो अपनी मातृभूमि - जन्मभूमि सुरीलों का गाँव क्योलारी जाने के लिए मुझे अवसरों की कोई कमी नहीं है। किंतु कुछ स्वास्थ्य की विवशताओं के कारण तथा कुछ दूसरी व्यस्तताओं के कारण गाँव जाना प्रायः कम ही हो पाता है। फिर भी सालभर में दो - चार मौके ऐसे आते हैं तब मैं सभी दिक्कतों - दुश्वारियों को भूलकर गाँव आ जाता हूँ। गाँव जाने का ऐसा ही एक खास मौका होता है अपने कीर्तशेष पिताश्री रामलीला व्यास व गंधर्व गंगादीन मास्टर एवं कीर्तशेष सहोदर राजगंधर्व सरयू भारती की स्मृति में महाशिवरात्रि पर संगीत समारोह के आयोजन का जब गाँव के प्रबुद्धजनों से लेकर हर व्यक्ति से मिलने का सौभाग्य मुझे मिलता है। गाँव की सामूहिकता के दर्शन करता हूँ। बच्चों से लेकर वृद्धजनों तक में सक्रियता के महत्वपूर्ण गुण को साक्षात् देखता हूँ। गाँव के बच्चों में अपनी कच्ची माटी के लिए अनुराग है। ' हमायौ गाँव ' का वात्सल्यमयी भाव है। युवाओं में ग्रामोत्थान के लिए एक जद्दोजहद है। गाँव के विकास को लेकर उनमें सकारात्मक सोच है और जो हमारे उम्रदराज बड़े - बूढ़े बुजुर्ग हैं वे गाँव की सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित बचाए रखने के लिए चिंतित हैं। बेटियाँ सीमित संसाधनों में भी अपने बलबूते पर आगे बढ़ रहीं हैं। शिक्षा के प्रति उनमें जागरूकता बड़ी है। वे अब डाक्टर , शिक्षक , इंजीनियर तथा सेनानी बन रहीं हैं। माता - पिता के संकीर्ण व दकियानूसी सोच से कोसों दूर होने के कारण अब बेटियों को खुला आसमान मिला है जहाँ वे स्वछंद होकर अपनी - अपनी योग्यताओं के वायुयान उड़ा रहीं हैं। बुलंदियों के झण्डे गाड़ने की ओर अग्रसर हैं। हम सभी जानते होंगे स्त्री गाँव की धुरी है। गाँव में पुरुषसत्तामक व्यवस्था होने के बावजूद स्त्रियों की स्थिति पहले से बेहतर है। वे पुरुषों के साथ कंधे से कंधे मिलाकर दिनरात जीतोड़ मेहनत करतीं हैं। अब हर फैसलों में उनके विचारों को महत्व मिलना शुरू हुआ है।

हम इसे 21वीं सदी की स्त्री जागरण की शुरुआत भी कह सकते हैं।

अभी - अभी गाँव के सँकरे गलियारों में खपरैलों की मुंडेरों से बैशाख के उग्र सूरज की ताती किरणें हरदिया रंग की लेप करने में लगी हैं। मैं अपने सुरीलों के गाँव क्योलारी के चलते - फिरते पुस्तकालय श्रमसाधक और अलमस्त 86 वर्षीय आदरणीय काका रामचरण कलाकार से भेंट करने उनके पास आ गया हूँ। कलाकार काका से बतियाने का मतलब है गाँव से लेकर चौरासी भर की सुख - दु:ख की खबरों की जानकारियों से रूबरू होना।किसका लगन कब है .. किसका विवाह होना है ...? और पिछले दिनों में उन्होंने जो कुछ पढ़ा है कहानी , कविता , लेख आदि का वे सार बताएँगे....फिर कुछ यादों में बसीं सामाजिक संदेशों से भरपूर कविताएँ सुनाएँगे , इसके साथ ही सामाजिक मूल्यों के क्षरण पर चिंता व्यक्त करते हुए नवनिर्माण की प्रेरणाएँ देंगे। यह जीवंत जीवन है आदरणीय रामचरण कलाकार काका का। जब भी मिलो कुछ न कुछ ऊर्जा देने वाले विषयों पर चर्चा करने से नहीं चूकते। वे आज भी उतने ही ऊर्जावान हैं जितने पहले थे। किंतु अब उनसे मिलने वालों की संख्या धीरे - धीरे कम होती जा रही है...।

मैं कलाकार काका के पास आकर बतिया ही रहा था तभी दरवाजे के सामने से निकल रहे किसी जमाने के रामलीला और नौटंकी के बहुत ही उम्दा कलाकार 80 साला आदरणीय सियाशरण बुधौलिया जी की नजर मुझ पर पड़ती है । मैं भी उन्हें देखता हूँ । बुधौलिया कक्का रास्ते से ही प्यार व विस्मय से कहते हैं , अरे शंकर ! तुम कब आए ..? और बड़े ललक के साथ हमारे पास आ जाते हैं। मै उन्हें प्रणाम करते हुए ससम्मान बिठाता हूँ। बीतरागी संत जैसी वेशभूषा है अब उनकी। लंबे - लंबे भक्क सफेद बाल हैं । सफेद अचला के ऊपर सफेद रंग का कुर्ता उन पर खूब फब रहा है। वह प्रसन्नता से भरे हमारे पास आकर बैठे हुए हैं । थोड़ा - सा हाल - चाल लेने के बाद मैं उन्हें कुरेदता हूँ । आपकी जिंदगी की गाड़ी कैसी चल रही है कक्का ? अब तो गाँव की रामलीला व नौटंकी तो खत्म ही होती जा रही है। मैं एक साथ दो - तीन सवाल उनसे कर बैठता हूँ...।

वे बड़े बिंदास होकर कहते हैं ... लला ! भगवान की कृपा से हमारी जिंदगी की गाड़ी खूब दौड़ रही है। फिर मेरे बचपन की यादें ताजा करते हुए कहने लगे , " शंकर ! तुम्हें तो मैंने गोद में खिलाया है। गाँव भरके बच्चे अपने जैसे ही लगते थे। ऐसा कहते हुए वह थोड़ी देर भावुक रहे फिर लंबी साँस भरते हुए बोले ...अब गाँव का आपसी सद्भाव मरता जा रहा है। वैमनस्यता बढ़ रही है । इसके साथ ही गाँव की देशी कलाएँ दम तोड़ रहीं हैं।

गाँव के आखिरी पायदान के दोनों कलाकारों की लगभग एक जैसी - सी पीड़ा है और चिंताएँ भी समान हैं.....

मैं सोचने लगता हूँ ....सुरीलों का गाँव क्योलारी जनपद जालौन का एक ऐसा विलक्षण गाँव है जो अपनी सांस्कृतिक व सामाजिक पहचान के लिए प्रदेश भर में मशहूर रहा है। जहाँ गाँव की युवा पीढ़ी विकास की नई इबारत लिखने के लिए जद्दोजेहद कर रही है , वहीं गाँव के उम्रदराज बड़े - बूढ़े सांस्कृतिक - सामाजिक तानेबाने को दुरस्त रखने की नसीहतें देते रहने में कतई गुरेज़ नहीं करते फिर भी गाँव आज अपनी कोई खास पहचान बनाने में पिछड़ा हुआ क्यों है ....?

कुलमिलाकर क्योलारी गाँव में अभावों की लंबी फेहरिस्त तो है मगर दरिद्रता-कंगाली और बदहवाली कतई नहीं है। गाँव की जो भौतिक आधारभूत संरचना है वह तो पूरीतरह से विकासोन्मुखी हो चुकी है। नयी सोच के युवाओं के मन में गाँव के लिए कुछ अच्छा करने की नित नवीन आकाँक्षाएँ अँकुरित हो रहीं हैं। वह दिन दूर नहीं जब यही अँकुरित पौधे एक दिन विशाल वटवृक्ष बनेंगे और समूचे गाँव को अपनी सुशीतल छाँव देंगे, रसभरे सुस्वादु फल देंगे अलमस्त अमराइयाँ देंगे और एक नया प्रगतिगामी जीवन देने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे ...

इन्हीं आनंदगंधी उम्मीदों को अपने साथ लेकर गाँव से शहर लौट आया हूँ फिर से यांत्रिक होने के लिए...।

डा. रामशंकर भारती
मूलनिवासी ग्राम व पत्रालय - क्योलारी
जनपद - जालौन 285001
(उत्तर प्रदेश)
पता - ए- 128/1 दीनदयाल नगर ,
झाँसी -284003
दूरवाणी - 9696520940
ईमेल ramshankarbharti2@gmail

प्रद्युम्न कुमार सिंह

मलइहाँ चोर

नदियाँ हमेशा से मानव व मानव सभ्यता की सहभागिनी रहीं हैं उनमें से एक यमुना का सम्बध मृत्यु के देवता यमराज से होने के कारण और अधिक महत्वपूर्ण है। यमुना सूर्य और संज्ञा की पुत्री है ऐसी मान्यता है। गाँव के अनपढ़ लोगों से भी पूँछने पर सहज में यही उत्तर मिलता है। बाँदा के पूर्वी छोर पर यमुना के किनारे बसा जोरावरपुर गाँव किसी परिचय का मोहताज नहीं है। इस गाँव को चोरी करने वाले लोग अपना आदर्श मानते थे। इसी गाँव में मलइहाँ नाम का एक चोर रहता था I जिसकी चोरी के किस्से आज भी लोगों के जेहन में

सहज ही आ जाते है। हुआ यूँ कि एक बार ऊँटो का एक बड़ा व्यापारी लोटनराम अपने ऊँटों को लेकर इस गाँव से होते हुए जा रहा था। बहुत अधिक यात्रा करने के कारण उसका भूख और प्यास के कारण बुरा हाल हो रहा था। उसका गला सूखा जा रहा था। उसके पैर भी और अधिक चल पाने की स्थिति में नहीं थे। उसे जब लगा कि इस तरह बिना खाये पिये वह अब और अधिक आगे नहीं बढ़ सकता तो उसने अपने साथी लहकुआ को रुककर भोजन और पानी की व्यवस्था करने के लिए कहा। लहकुआ मालिक की आज्ञा पाकर ऊँटो के काफिलों को रुकने का संकेत किया। सभी ऊँटो को रोक दिया गया अब लहकुवा अपने कुछ साथियों के साथ भोजन और पानी की तलाश में वहाँ से निकल गया और भोजन पानी की तलाश करते हुए चलते चलते जोरावरपुर गाँव पहुँच गया। एक हवेली सा बडा घर देखकर दरवाजे के पास खड़े होकर उसने आवाज लगाई। घर के भीतर से ही गुर्राहट के साथ आवाज आई। कौन खादिम है इस समय जो परेशान करने चला आया। दरवाजे के बाहर खड़ा लहकुवा बड़ी धीमी आवाज में बोला माई बाप मै हूँ एक मुसाफिर। कुछ खाना पानी की चाहत लेकर आपके दरवाजे पर दस्तख दिया हूँ।

धीमी आवाज सुनकर भीतर से फिर से उसी रौब और दौब के साथ आवाज आई क्या मैने पूरे संसार का ठेका ले रखा है ? या फिर मेरा घर कोई खैरात -खाना है कि चाहे जो मुँह उठाये चला आये। लहकुवा अन्दर तक सहम गया कि कहाँ से मैने इस दरवाजे को खटखटा कर बेकार में अपना समय नष्ट किया। वह चलने ही वाला था तभी खटाक की आवाज के साथ दरवाजा खुला। तो उसने देखा कि एक बहुत ही जपल आदमी चंपतलाल दरवाजे के सामने खड़ा था। उसे देखते ही लहकुवा ने कहा माई बाप मेरा मालिक लोटनराम ऊँटों का बहुत बड़ा व्यापारी है। वह लम्बी दूरी तय करने के कारण थककर चूर हो गया है। भूख प्यास से व्याकुल उसने मुझे आपके पास भेजा है। भेजते समय उसने मेरे सामने शर्त रखी थी कि उसके रास्ते में जो भी पहला घर मिल जाये उसी घर से मुझे भोजन और पानी लाना। आपका की पहला घर मुझे दिखाई दिया सो मैने खटखटा दिया। अब आप ही बतायें कि मैं दूसरे घर कैसे खटखटाता? चंपतलाल हल्के से मुस्कुराया फिर उसे अन्दर बैठने का इशारा किया तो लहकुवा जमीन पर ही अपनी साफी बिछाकर धम्म से बैठ गया। थोड़ी देर के पश्चात चम्पतलाल घर के भीतर से भोजन की थाली व बाल्टी में पानी लेकर निकला जिसे देखकर लहकुवा को पहले तो अपनी आँखों पर विश्वास ही नही हो रहा था कि रौबीली आवाज वाला वह आदमी उसके लिए खाना और पानी लाया है। पर प्रत्यक्ष के सामने शक सुबह की गुंजाइस ही कहाँ होती है? इसलिए लहकुवा ने अपने साथ आये भगतराम से भोजन और पानी ले चलने के लिए कहा। लहकुवा के कहे अनुसार भगतराम ने वैसा ही किया।

लहकुवा के साथ जब भगतराम खाना पानी लेकर अपने मालिक के पास पहुँचा तो मालिक लोटनराम ने भगतराम से पूँछा कि तुम तो परदेशी हो इतनी शीघ्रता से तुम पर कोई विश्वास भी नहीं करेगा। ऐसे में बताओ आखिर तुम्हे भोजन और पानी कैसे प्राप्त हुआ? तो भगतराम ने सारी बात कह सुनाई। लोटनराम को लगा कि यह उचित स्थान है क्यों न रात्रि को इसी जगह पर रुक लिया जाये। अतः उसने अपने मन की बात अपने साथियों से कह सुनाई। सभी ने अपनी सहमति हाँ में दे दी। अब गाँव की सिंवार पर बड़े बड़े पतीले चढ़े और खाना बनने लगा खाना खाने के पश्चात सभी लोग निश्चिन्त हो सोने लगे। थकान के कारण गहरी नींद आई ही थी कि मलइहाँ चोर ने ऊँट चोरी करने का प्लान बनाया। उसने व्यापारियों के एक ऊँट की चोरी की और उसे खपरैल छाई हुई अँटारी में छिपा दिया। सुबह होने पर जब व्यापारी एवं उसके साथी नींद से जागे और अपने ऊँटो की गिनती की तो एक ऊँट गिनती में कम निकला। सभी को बड़ा अचरज था कि आखिरकार ऊँट गया तो कहाँ गया। क्योंकि

चारों से बाँधी गई सुरक्षात्मक रस्सियाँ वैसी की वैसी बंधी हुई थीं। फिर भी ऊँट गायब। ऊँट की खोज चारों ओर की गई पूरे गाँव में शोर हो गया कि व्यापारी के एक ऊँट की चोरी हो गई। व्यापारी ने गाँव में भी अपने ऊँट की खोज की पर ऊँट का कहीं भी पता नहीं चला। तब गाँव के सरपंच पलटूराम ने अपने कारिन्दो को हुक्म दिया कि मलइहाँ को पकड़कर पंचायत के समक्ष लाया जाय। मलइहाँ को पकड़ कर लाया गया। सरपंच ने पूँछा क्यों रे मलइहाँ क्या तुमने ऊँट की चोरी की है ? तो उसने बड़ी सहजता से कहा जी सरपंच साहब यदि आप या व्यापारी ढूंढ ले तो ले लें अन्यथा की स्थिति में ऊँट मेरा होगा। सरपंच ने अपने कारिन्दों को मलइहाँ के घर भेजा जिससे ऊँट को खोजकर व्यापारी के सुपुर्त किया जा सके। काफी खोजबीन के बाद भी करिन्दे खाली हाथ वापस लौट आये। उनके हाँथ कुछ भी नहीं लगा। सरपंच झल्लाया और मलइहाँ को डाँटने के अंदाज में बोला क्यों रे मलइयाँ? तू झूठ क्यों बोल रहा है? ऊँट क्या सुई है जो तूने छिपा दिया और खोजने पर भी नहीं मिल रहा I मलइहाँ ने फिर से वही बात दोहराई पंच और गॉव वाले सभी हैरान थे कि आखिरकार मलइहाँ ने ऊँट की चोरी की तो ऊँट को छिपाया कहाँ होगा? सबके अपने अपने कयास थे ऊँट के सम्बध में लगाये गये सभी अनुमान बेकार ही साबित हुए।

हार मानकर व्यापारी लोटनराम ने सरपंच पलटूराम से कहा कि सरपंच साहब शायद मेरी किस्मत में वह ऊँट है ही नहीं इसीलिए तो वह नही मिला। अब मेरी आपसे एक गुजारिस है कि मलइयाँ मात्र इतना बता दे कि ऊँट को उसने छिपाया कहाँ है? मैं आपसे वादा करता हूँ कि अब ऊँट पर मेरा कोई अधिकार नहीं रहेगा। यह ऊँट उसी का रहेगा। मलइयाँ की तरफ सरपंच एवं पंचों ने देखा। मलइयाँ मुस्कुराया और बोला सरपंच साहिब हम अनपढ गंवार आपके सामने यदि बता देगे तो भी दण्ड मिलेगा ही फिर मैं क्यों बताऊँ ऊँट के बारे में। सरपंच और पंचों ने एक दृष्टि व्यापारी लोटनराम पर डाली और फिर गाँव वालों की ओर मुखातिब होते हुए बोले देखो मलइयाँ यदि तुम नही बताओगे तो निश्चित रूप से तुम दण्ड के भागीदार होगे। यदि तुम बता देते हो तो तुम्हे दण्ड से मुक्त कर दिया जायेगा। गाँव वाले सरपंच एवं पंचों की ओर देखकर उनकी हाँ में हाँ की हामी भरी। मलइयाँ भी गाँव वालों की ओर देखकर बोला ऊँट को चोरी करने के बाद मैने अपनी अटारी में बाँधकर रखा है सभी लोग ने मलइयाँ की ओर देखा और मुस्कुरा दिये। पर अभी भी सभी के जेहन में एक बात रह रहकर आ रही थी कि आखिरकार मलइयाँ ने ऊँट को अटारी पर चढ़ाया कैसे होगा। ऊँट कोई हल्का फुल्का जानवर तो होता नहीं या इतना छोटा भी नहीं होता कि उसे अकउरिया कर कहीं भी चढ़ाया जा सके।

सभी ने मलइयाँ से पूँछा मलइयाँ आखिरकार तुमने ऊँट को अटारी पर चढ़ाया तो चढ़ाया कैसे? मलइयाँ मुस्कुराया किन्तु कोई भी जवाब नही दिया। लोग समझ नहीं पा रहे थे कि मलइयाँ अचानक से मौन क्यों साध गया? तभी भागते हुए मलइयाँ का बेटा चन्दन वहाँ पर आ गया लोगों ने उसे पास बुलाकर पूँछा तो उसने ऊँट के अटारी चढ़ाने का सारा राज उगल दिया जिसे सुनकर

व्यापारी सहित सभी लोग हँस पड़े। इस घटना के बाद कई लोगों ने मलइयाँ को अपना आदर्श मान चोरों के कई अनेक गुट बना लिए किन्तु इनमें एक बात जो सबमे समान थी वह यह थी कि ये कोई चिरकुट चोर नहीं थे बल्कि नामी गिरामी चोर थे जो बताकर चोरी करते थे। उनको पकड़ने के लिए आप चाहे जितने पहरे बैठा दो यदि इन्होने आपका चैलेन्ज स्वीकार कर लिया है तो चोरी अवश्य करेंगे आपके पहरे उन्हे रोकने में नाकामयाब ही होंगे।

आज भी जोरावरपुर एवं उसके आस-पास के गाँव में हड़कुवा,जरतुवा, भुंइयहा, जगलाल मंगतूराम जैसे लोग मलइयाँ की परम्परा को जीवित किये हुए है। यद्यपि यह एक अवगुण है जिसे लोग आज भी अपने बीच बनाये रखना चाहते है किन्तु इस अवगुण को गाँव से हमेशा हमेशा के लिए खत्म करने के लिए एक वीरांगना शिवपतिया ने लड़ने का वीणा उठाया है यद्यपि कई बार उसे असहज स्थितियों का भी सामना करना पड़ा है फिर भी वह डरी नही बल्कि और मुखर हो इस कुप्रथा को हमेशा हमेशा के लिए खत्म करने के लिए सतत प्रयासरत है। शिवपतिया का प्रयास निश्चित रूप से सराहनीय है जो किसी बुराई के खात्मे के लिए पर्वत से भी टकराने का माद्दा रखती है। उसका विश्वास है कि एक दिन वह अपने मिशन में जरूर कामयाब होगी। उसका यही विश्वास उसमे उत्साह का नवसंचार करता रहता है और वह अपने कार्य में उतनी ही तन्मयता से जुटी हुई थी। जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है कि शिवपतिया ने चोरी की कुप्रथा को हमेशा हमेशा के लिए खत्म करने के लिए अपना सब कुछ दाँव में लगा दिया था। उसकी मिशन का अन्तिम पड़ाव भी आने ही वाला था। या यूँ कहें कि आ ही गया जब हल्के का तेज तर्रार दरोगा भूपत लाल नई पोस्टिंग लेकर कस्बे के थाने में आया। उसने गाँव मे एक सभा बुलाई और गाँव वालों से कहा कि यदि आप सभी चोरी के धन्धे को छोड़ दे तो मैं आप सभी को विश्वास दिलाता हूँ कि मैं अपने व्यक्तिगत प्रयासों एवं सरकार के सहयोग से तुम्हारे गाँव में पढ़ने के लिए स्कूल खुलवाने का प्रयत्न करूंगा। जिसमे पढ़कर तुम्हारे बच्चे आगे बढ़कर देश के निर्माण में अपना अहम योगदान देंगे। गाँव वालों को दरोगा की बात अच्छी लगी अतः उन्होने उससे वादा किया कि वे अब से कभी भी चोरी जैसे गलत कार्यों को नहीं करेंगे न ही अपने बच्चों को ही इस ओर जाने देंगे। पूरी सभा ने दरोगा भूपत लाल को धन्यवाद दिया किन्तु दरोगा बाबू ने उसी क्षण कहा कि वह इसका असली हकदार नहीं है बल्कि तुम्हारी ही बेटी शिवपतिया इसकी असली हकदार है। जिसकी बदौलत आज तुम सभी लोगों ने इस बुराई को समझा और उसके खात्मे के लिए एकजुट हुए। उसकी हमेशा से यही इच्छा थी कि उसका गाँव भी देश के अन्य गाँवो सरीखा देश की प्रगति में सहायक बने और उसके अपने लोग उसके सहभागी। बधाई देनी ही है तो अपनी उस बेटी को दो। जिसने विषम परिस्थितियो में भी उसे सम करने का प्रयास किया। सभी लोगों ने शिवपतिया की ओर श्रद्धा भरी निगाह से देखा तो उसकी आँखों से खुशी के आँसू ढुलक गये।

कुबेर मिश्रा की कवितायें

अहिंसा के नारों से हमने क्या खोया क्या पाया ??

अहिंसा के नारों से हमने क्या खोया क्या
पाया ??
उपदेश बुद्ध और गाँधी के
कायरता देकर चले गये
इस आर्य भूमि पर आर्य पुत्र
किस तरह निरन्तर छले गये

वह चन्द्रगुप्त का शौर्य कहाँ
भारत अखण्ड की अभिलाषा
साकार स्वप्न कर दिखलाया
भारत को दी नव परिभाषा

सम्राट अशोक भुजाओं ने
अफगान राष्ट्र तक घेरा था
हिन्दोस्तान की ध्वज गरिमा
ईरान नगर तक फेरा था

जौहर भूले क्यों पृथ्वी राज
आक्रान्ताओं पर भारी था
आखिरी साँस तक भारत की
संप्रभुता की चिंगारी था

पर शायद बुद्ध अहिंसा ने
जब अपने पर को फैलाया
हिंसा का प्रतिकारी स्वभाव
हिन्दोस्तान ने बिसराया

मुगलों के अत्याचारों से
फिर आर्य भूमि जब रोई थी
कितनी ही आर्य पुत्र संख्या
इस्लाम गोद में सोई थी

हम भूल गये राणा प्रताप के
स्वाभिमान के नारों को
जिसने रोका था मुगलों की
कौमी उन्मादी धारों को
जिनकी प्रतिकार कथायें सुन
उमड़ी थी क्रान्ति वीर टोली
जो गोरों की गरदन पर चढ़
खेली थी शोणित की होली

नेता सुभाष ने लहू माँग
आजादी पथ पग मोड़े थे
आजाद भगतसिंह राजगुरू
गोरों की हिम्मत तोड़े थे

अनगिनत वीर बलिदानी की
कुर्बानी काम नहीं आई
कहते हैं लाठी खड्ग बिना
केवल गाँधी जी ने पाई

क्या अंग्रेजों से मुक्ति मिली
या देश गुलामी ही पाया
सिर मुकुट सजाकर बैठ गयी
पीढ़ी दर पीढ़ी प्रतिछाया

जिनके सिर सेहरा बँधा
आर्य पुत्रों को उसने समझाया
क्या एक गाल पिटना कम था
जो दूजे को भी पिटवाया

फिर नाम सहिष्णु दिया उनको
बर्बरता प्रीति अपार बढ़ी
इस्लामी गाँधी करण किया
सेकुलर परिभाषा शीश चढ़ी

जो नहीं कर सके मुगल श्वेत
प्रतिछाया ने वह कर डाला
उन आर्य पुत्र से शौर्य छीन
उनको का पुरुष बना डाला

ईरान और अफगान राष्ट्र से
साफ हो गये आर्यपुत्र
फिर बंगला पाकिस्तान मिटे
कश्मीर तलक खो गये चित्र

दुनिया की रीति पुरानी है
शुभ अशुभ सभी कुछ अंदर है
इतिहास उसे ही ले चलता
जो जीता वही सिकंदर है

अपनी संस्कृति आक्रान्ता का
प्रतिकार नहीं यदि कर सकते
अपनी कायरता के कारण
देखो तिल तिल खुद को मरते

अस्तित्व कठिन बचना कुबेर
उपदेश महात्मा गांधी से
घटते आये घट रहे नित्य
कौमी उन्मादी आँधी से

गोरी प्रतिछाया के द्वारा
निर्मित इतिहास बदलना है
अस्तित्व बचाना है अपना
तब सोयी आस बदलना है

सदियों के बाद आर्य पुत्रों ने
फिर से ली अंगड़ाई है
उन्माद घटायें बिखर रहीं
आँधी बनकर फिर छायी है

हारने न देना सारथि को
हे आर्य पुत्र संबल देना
खोई उस गौरव गरिमा को
जो चाह रहा फिर से लेना

■■■■

अभी तक नयन कुछ नहीं भूल पाये

वो उर्मिल उदधि की मचलती तरंगे
हवा पर खिंचे मुग्ध पलकों के साये
वो भू पर बिछा चाँदनी का बिछौना
अभी तक नयन कुछ नहीं भूल पाये

वो रजनी का अंचल सितारों की सरगम
खुले केश मानो सघन अभ्र छाया
वो सुस्मित सरस बिंब अनुभूति राका
तड़ित गति सकुच रूप हृदि में समाया

बहकते हुये पग सजल दृग किनारे
सकुचते लरजते अधर थरथराये
वो उठते हुये ज्वार का जलजला सा
अभी तक नयन कुछ नहीं भूल पाये

वो अंबर समेटे हुये थिर जलाशय
दिशाओं का चुंबन अधर रातरानी
वो संदल सी साँसें भुजाओं का बंधन
चटकती कली सी मचलती कहानी

घटाओं का घिरना तड़पना बरसना
इला हर्ष रंजित बदन कँपकँपाये
वो लहरों की हलचल का थमना सिमटना
अभी तक नयन कुछ नहीं भूल पाये
■■■■

लघुकथा

ख़ास दोस्त

“हाय रवि |“

“अरे...मधु ! तुम. ? यहाँ..?” रवि ने बाइक रोकते हुये आश्चर्यचकित कहा |

“ हाँ ! दू...र से ही तुमको आते मैंने देख लिया था | काफी दिनों बाद मिले हो, चलो सामने रेस्टुरेंट में बैठकर बातें करते हैं |” कार को लॉक करते हुये मैं रवि के साथ रेस्टुरेंट में घुस गई |

“ बताओ, क्या...पिओगे ?”

“जो पिलाओगी...पी लूँगा |”

“ मुझे सब पता है, तुम जैसे चंदन का टीका लगाने वाले और लंबी शिखा रखने वाले व्यक्ति चाय, कॉफ़ी, लस्सी से अधिक, कुछ पी ही नहीं सकता !” मधु ने चुटकी लेते हुये कहा |

“कसम से...आज जो पिलाओगी... पीऊंगा | ब्लैक जींस और पिंक टी शर्ट’ में उफ्फ्फ.. ! तुम सचमुच बहुत स्मार्ट लग रही हो |” मेरे कंधों पर दोनों हाथ रखते हुए रवि ने कहा|

“अरे वाह... शादी होते ही इतना परिवर्तन हो गया ! अब तुम बढियां मजाक भी करने लगे हो ! चलो

ठीक है, फिर मैं अपनी पसंद की बियर मंगवाती हूँ |”

“हाँ..हाँ... मंगवाओ |” रवि ने हँसकर कहा |

मैं मन ही मन विचारने लगी, कुछ तो बात है...कॉलेज के दिनों में जिस ‘शराब’ शब्द के नाम मात्र से रवि को बेहद घृणा होती थी, अचानक से ऐसा परिवर्तन ...? ! मैं रवि के मन को टटोलने का प्रयास करने लगी, “अच्छा, पहले ये तो बताओ, बीबी कैसी लगी ? हनीमून कैसा रहा ? देखो, मुझसे कुछ छुपाना नहीं.. | मैं तुम्हारी प्रिय दोस्त हूँ | हमने चार सालों तक एक ही कॉलेज में पढ़ाई की, और केंटीन में साथ खाया भी | इसलिए हम एक दूसरे से वाकिफ हैं | फर्क है तो केवल हमारे संस्कार में ... तुम पुरातन विचारधारा ,मतलब पोंगापंडित, और मैं मॉड , हा..हा..हा..|” बियर भरे ग्लास से ग्लास टकराते हुए मैं चीयर्स बोलकर जोर से हँस पड़ी |

“अरे... यार !छोड़ो बीबी की बातें !कुछ भी अच्छा नहीं रहा ! लेकिन सुनो, तुम जब भी शादी करना ,लड़के को अच्छी तरह सब देख -परख कर ही करना | वरना , मेरी तरह ...! ” बात को बीच में छोड़ते हुये रवि ने एक ही

सांस में ग्लास भरा बियर गटक गया |

“ क्यूँ.. छोड़ूँ !? बताओ, बीबी अच्छी नहीं लगी ? शादी से पहले उसे अच्छी तरह देखा नहीं या उससे बातचीत नहीं हुई थी ? ”

“हाँ...देखा था, हल्की बातचीत भी हुई थी ! बस चेहरा ही देखता रह गया ! उसकी हाई-हील वाली सेंडल पर मेरी नजर ही नहीं पड़ी ! अब लगता है, इसी वजह से उसे साड़ी पहना कर लाया गया था | वो मेरे कंधे के बराबर भी नहीं है ! तुम ही बताओ, कहाँ मेरी लम्बाई और कहाँ उसकी ! उसके साथ बाहर निकलने में शर्म आती है मुझे ... ! मुझे संस्कारवाली लड़की चाहिए थी...इसका मतलब ये तो नहीं कि बेमेल लड़की !! कभी-कभी माँ-बाप भी स्वार्थी हो जाते हैं | शादी बच्चों की होती है और मनमानी अपनी करते !” मैं, हतप्रभ उसे एकटक देखती और सुनती रही | नशा, उसकी आँखों में पतले लाल धागों की तरह स्पष्ट दिख रहे थे |

“रवि...थोड़ा सोचो , पत्नी पाकर भी तुम प्यासे हो ... जानकर मुझे अच्छा नहीं लगा | हाइट में वो तुमसे बहुत छोटी है, तो क्या हुआ ? बस इतनी सी बात !? तुम्हें पता होगा, इस मॉडर्न जमाने में भी एक शख्स ने एसिड अटैक पीड़ित लड़की को अपना अर्धांगिनी बनाया ! उनके बच्चे भी हुये | और एक तुम हो ...?! संस्कारवान, पूजा-पाठ करने वाले होकर भी हाइट के कारण अपनी नवविवाहिता से...! उफ्फ ! तरस आती है तुम्हारे पुरातन संस्कार पर ! ” मैंने हिम्मत बाँधकर उसे समझाने की पूरी कोशिश की |

कुछ देर के लिए सन्नाटा पसर गया | आधुनिक संस्कार, पुरातन संस्कार पर भारी दिख रहा था |

अचानक रवि हाथ जोड़कर खड़ा हो गया, तुम ठीक कहती हो , ” आधुनिकता को ओढने के बाद भी तुम्हारे अंदर संस्कार जीवित है, और मैंने अपने पुरातन संस्कार से कुछ नहीं सीख सका ! मधु, बहुत उपकार रहेगा तुम्हारा ! तुमने मेरे दाम्पत्य जीवन को मुरझाने से पहले बचा लिया | जाने दो मुझे ,वो मेरा इंतजार कर रही होगी |” रवि, तेज कदमों से बाहर निकल गया | उसके साथ मैं भी |

मैंने देखा, उसकी आँखों में अब लाल डोरों की जगह, पश्चाताप के आँसू बाहर आने को उताहुल थे |

मैं भाव विभोर, उसे बाइक से दूर जाते देखती रही.. आँखों से खुशी के शैलाब उमड़ पड़े !

'"वो मेरा बेहद ख़ास दोस्त जो था, कुछ आँसू उसके सुखी जीवन के लिए भी बनते थे |”

यही सोचते हुए आँसू पोछ कर मैं अपने कार के ड्राइविंग सीट पर बैठ गई |

मिन्नी मिश्रा, पटना

इन्दु सिन्हा की दो लघुकथाएं

"कुछ तो लोग कहेंगे"

कोरोना महामारी में रितेश का बिजनेस बन्द हो गया था | घर में बेटी मीनल की शादी | क्या करें ? कर्जा लेने के लिए सब दूर कोशिश कर रहा था |बड़ी मुश्किल से पाँच लाख जमा कर पाया था |

होने वाले दामाद रंजन ने मना किया था कि मुझे कुछ नही चाहिए गहने और महंगे सामान के चक्कर मे परेशान ना हो,घर मे सब भौतिक सुख सुविधा है | बस दोनो परिवार मिलकर शादी कर दो |

रितेश किस मुँहसे दामाद को बताता कि मीनल ने दबाव बनाया हुआ है, पहली शादी वो भी लड़की की कुछ भी करो कर्जा लो लेकिन शादी में मुझे ढेर सा सामान और गहने चाहिए | ससुराल वालों को क्या मुंह दिखाऊंगी, ससुराल मे मेरी नाक कट जाएगी |

" वृद्धाश्रम"

वृद्धाश्रम में दैनिक उपयोग की वस्तुएं बांटने के लिए महिलाओं का ग्रुप आया था | दैनिक उपयोग की वस्तुओं की किट का आईडिया राखी का था | सामान्य तौर पर यह वस्तु है लोग ओर संस्था दान नहीं करते | सबको बांटने के बाद जब वह बाहर निकले, तो एक बुज़ुर्ग मोबाइल पर बातें करके बोल रहे थे, बेटा कुछ सामान आया है पहले का रखा है, आकर ले जाओ क्या करूंगा मैं अकेला | पता चला कि कुछ बुजुर्ग राजी मर्जी से रहते हैं बेटे बहू भी उनके अच्छे हैं |लेकिन दान में मिलने वाला सामान बेटे के घर भिजवा देते है

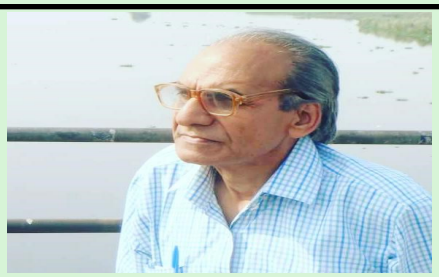

बिग बॉस

लघुकथा : अशोक वर्मा

पहाड़गंज चौराहे की रेड लाइट खराब हो जाने से सभी गाड़ियां अपने गंतव्य तक जाने की जल्दी में फंसी पड़ी हैं। ड्राइवर राम सिंह अपने बॉस के साथ पिछले पंद्रह मिनट से जीप में बैठा है। सुबह से ही उसका मूड खराब है। बॉस के कहने पर वह नीचे उतर कर चारों तरफ़ नज़र घुमाता है।जून माह का तपता हुआ सूरज आग बरसा रहा है। राम सिंह भी बॉस को लेकर भीतर ही भीतर उबल रहा है।

-----आज पिताजी को हड्डियों के डॉक्टर को दिखाना था।

पी ए से फोन करा दिया कि ज़रूरी मीटिंग है, छुट्टी मत करना। घटिया कहीं का।

------ दिन भर इधर उधर के काम कराता है। रात दस बजे तक पीछा नहीं छोड़ता। भूतनी का।

------कभी इसकी घर वाली को शॉपिंग कराओ तो कभी बच्चों को। बंधुआ मज़दूर बना दिया हरामी ने।

तभी ट्रैफिक खुल जाता है। रामसिंह जीप में बैठकर जीप स्टार्ट कर देता है।

"जल्दी करो राम सिंह। दो बजे की मीटिंग है। एक बजकर चालीस मिनट हो गए है।" बॉस चिंतित स्वर में कहता है।

राम सिंह तेजी से जीप को निकालता है। अब जीप पहाड़गंज पुल की चढ़ाई चढ़ रही है। उसने जीप को पुल के बीचोबीच रोक दिया है। वह चाहता है कि बॉस से भरी दोपहरी में धक्के लगवाए। वह दिखावे के लिए जीप के पुर्ज़ों के साथ छेड़छाड़ करता है।

बॉस की घबराहट बढ़ रही है।

तभी राम सिंह को अपने पिता की बात याद आती है कि बेटा, ड्यूटी को भगवान की पूजा समझ कर करना और अपने बॉस की हमेशा इज़्ज़त करना।

"जल्दी करो राम सिंह , दस मिनट रह गए हैं , मीटिंग शुरू होने में।" बॉस अधीर हो उठता है।

" चिंता न करो सर, अभी पहुंचाता हूँ। " कह कर राम सिंह तेजी से जीप को गाड़ियों के बीच से निकालकर ठीक दो बजे मीटिंग हाल के बाहर खड़ी कर देता है। बॉस राहत की सांस लेते हुए फुर्ती से भीतर चला जाता है।

दो घण्टे बाद मीटिंग समाप्ति पर बॉस हँसते हुए बाहर निकलता है और संकेत से राम सिंह को बुलाकर कहता है---

" राम सिँह, ये विज़िटिंग कार्ड है। कल इस नर्सिंग होम में पिताजी को ले जाना। डॉ भारद्वाज से मिलना। वे पूरा चैक अप करेंगे। कोई पैसा नही देना उन्हें, वो मेरे फ्रेंड हैं।। और सुनो, जीप ले जाना।"

राम सिंह अपने बॉस का यह रूप देखकर हतप्रभ है। "थैंक्यू सर।" वह होले से कहता है। उसका दायाँ हाथ सेल्यूट की मुद्रा में उठ जाता है।

110, लाजवन्ती गार्डन , नई दिल्ली -- 110046 दूरभाष 9250909592

मोहन राजेश

राजनीति

नतीजे आ गए थे। नेताजी फिर जीत गए लेकिन इस बार जीत का रंग फीका ही रहा क्योंकि उन्होंने तो जैसे तैसे दो -चार हजार मतों से अपनी सीट निकाल ली थी पर प्रदेश से पार्टी का पूरा सफाया हो गया। ऐसे में मंत्री तो क्या..... किसी बोर्ड के चेयरमैन बनने तक की संभावनाएं भी समाप्त हो गई थीं।

इस चुनाव में उन्होंने कोई आठ - दस करोड़ रुपए लगाए थे , इस उम्मीद में कि पांच साल में सौ करोड़ तो बना ही लेंगे... किंतु अब तो मूल निकलने की भी गुंजाइश नहीं दिखाई दे रही थी।

वे भीतर ही भीतर किलस रहे थे, तिस पर तुर्रा यह है कि बधाइयां देने वालों का तांता लगा हुआ था। पार्टी कार्यकर्ता और उनके कारिंदे तो रिजल्ट आने से पहले ही उनकी बढ़त बनने के साथ ही लड्डू पेड़े और मिठाई के नाम पर हजारों रुपए झटक चुके थे।.. और वे अपने अंतस: की पीड़ा अपने भीतर संजोए, नकली दांतों की बत्तीसी चमकाते हुए लोगों की बधाइयां, पुष्पहार मालाएं आदि स्वीकार कर रहे थे।

रात बारह -एक बजे वे जलसे से फारिग हुए और अपने शयनकक्ष में एकांतवास में अपनी इस एकांतिक जीत पर विचार कर रहे थे।

... यदि सत्ताधारी दल पूर्ण बहुमत में नहीं होता तो वे येन -केन- प्रकारेण कुछ सौदेबाजी कर अपनी एकाध गोट तो हरी कर ही लेते किन्तु अभी तो सामने शून्य था।

व्हिस्की का गिलास टेबल पर पटकते हुए उन्होंने अपने कामदार जुगनू को आवाज दी। जुगनू को साहब की मन: स्थिति का पता था और वे उनके बुलावे के इंतजार में ही जाग रहा था।

जुगनू के शयनकक्ष के द्वार तक पहुंचते ही नेता जी ने हुकुम सुनाया -- "बिरजू को बुलाओ"

बिरजू साहब का प्रॉब्लम शूटर था। जुगनू का फोन मिलते ही बाइक दौड़ाते हुए कोठी आ पहुंचा था।

"बिरजू अपनी पार्टी सत्ता से बाहर हो गई है। चुन्नीलाल का सी .एम बना तय है। कल परसों में इसकी घोषणा भी हो जाएगी। उससे पहले कुछ ऐसा मसाला लाओ कि स्साला अपनी टांगों पर चलकर हमारे कदमों में आ गिरे।" - नेता जी के लड़खड़ाए ,भर्राए स्वर में आदेश कम, याचना अधिक थी।

"समझ गया सर आप निश्चिंत रहें, काम हो जाएगा। मैं कल सुबह ही माया मेम से बात करता हूं" - बिरजू के आत्मविश्वास से लबरेज स्वर ने नेताजी में प्राण फूंक दिए... बिरजू के साथ बोतल को निबटा कर वह सोफे पर ही पसर गए।

अगले दिन बिरजू ने चुन्नीलाल की पूरी जन्मपत्री मय फोटोग्राफ्स और सबूतों के साथ लाकर नेताजी की मेज पर पटक दी।

... तीसरे दिन टीवी पर खबर आ गई कि ईमानदार पार्टी के इकलौते विधायक हरजी भाई सत्यनिष्ठ पार्टी में सम्मिलित गए हैं और संभावना है कि उन्हें मंत्रिमंडल में भी सम्मिलित किया जाएगा।

फिर से वो बचपन लौटा दो

क ख ग घ पुनः पढ़ा दो
स्कूलों की सैर करा दो
हंसते गाते पढ़ने जाएं
पहली की कक्षा लगवा दो..।।

छुपन-छुपाई फिर खेलेंगे
पेड़ों से अमियाँ तोड़ेंगे
उछल कूद वाली डाली की
फिर से वो खुशियाँ लौटा दो..।।

गर्मी की छुट्टियां मनाने
फिर से नानी के घर जाऊं
आइसक्रीम खाने की ज़िद हो
फिर से वो भोंपू बजवा दो..।।

सुनूँ कहानी पहले वाली
जिसमें राजा-रानी हों
बूढ़ी दादी के संग सोऊं
फिर से वो खटिया बिछवा दो..।।

जात-पात का भेद मिटाकर
साथ बैठकर हम खाएं
सुख-दुःख को हम मिलकर बांटे
फिर से वो बचपन लौटा दो..।।
फिर से वो बचपन लौटा दो..।।

विजय कनौजिया

रे आदमकद !

हो गया है तू कितना बौना!
तुझे हर वक्त चाहिए
सुख सुविधाओं
का बिछौना!
भूल गया है तू,
इस पुण्य धरा में
कहां-कहां महान
सभ्यता- संस्कृति के,
गौरव चिन्ह छुपे हुए हैं
अपने मन से पूछ,
क्या तूने कभी खोजें हैं!

अधुनातन रंग में रंग गया है
जड़ों को खोखला कर के,
अकेलेपन में ढ़ल गया है!
दिखावे का और भटकाव
का मार्ग अपनाकर,
तू ख़ुद को भूल गया है।

कण-कण है जिसकी
शक्ति से गतिमान,
कभी गहराई में उतर
ख़ुद ही हो जाएगी,
उससे पहचान
यूं भोग विलास, बनावट
का बजाकर तंबूरा,
काल का भोग बन
विस्मृत कर रहा,
अपना अस्तित्व पूरा!

इस नकलीपन
को कहीं फेंक दे!
पहनकर सच का चोला,
शांति ,सुकून, प्रेम की
त्रिवेणी में झूल झूला।
किसी से क्या सत्य पूछना है!
किसी से क्या सच सुनना है!
जब स्वयं के भीतर बहता,
आध्यात्म का पावन झरना है
जो अनिवर्चनीय, अप्रतिम,
शाश्वत,अमोघ अभ्यर्थना है।

अनुपमा अनुश्री

विजय कुमार की दो लघुकथाएं

जन्मदिन

आज अमित का जन्मदिन था।

अमित के जन्मदिन की खुशी में उसके माता-पिता ने घर में कीर्तन रखा हुआ था। कीर्तन दोपहर को शुरू होकर शाम तक चला। शाम को अमित ने अपने पिता को केक लाने के लिए कहा। वह अपने दोस्तों के बीच अपने जन्मदिन का केक काटना चाहता था।

इससे पहले कि उसके पिता केक लेने जाते, घर आए हुए मेहमानों में से कुछ लोगों ने अमित के पिता को रोक दिया, "आज के दिन केक नहीं लाते।"

जब अमित ने यह सुना तो वह केक लाने की जिद करने लगा। तब मेहमानों ने उसे समझाया, "बेटा, घर में आज कीर्तन हुआ है। सभी लोगों ने भगवान का प्रसाद खाया हुआ है। केक में अंडा होता है। इसलिए केक नहीं खाना चाहिए।"

रात को खाने के समय बहुत से लोग खाने के साथ साथ मदिरा का सेवन भी कर रहे थे और नशे में झूम रहे थे। सभी नाच गाने में व्यस्त थे और मस्ती कर रहे थे, किंतु अमित दुखी मन से अपने पिता के साथ बैठा यह सब देख रहा था। ये वही लोग थे जिन्होंने अभी कुछ घंटे पहले केक में अंडा होने की बात कहकर अमित के पिता को केक लाने से मना कर दिया था।

अमित ने बड़ी मासूमियत से अपने पिता से पूछा, "पापा, क्या भगवान शराब के लिए मना नहीं करते?"

किसी ना किसी

मैं मोटरसाइकिल से सड़क पर जा रहा था। मेरे बगल से एक 10-12 साल का लड़का तेजी से अपनी बाइक से ओवरटेक करके निकल गया। मैंने देखा उसने ऐसा ही अगली गाड़ियों के साथ भी किया।

मुझे अभी कुछ दिन पहले की घटना याद आ गई, जब एक लड़के की दुर्घटना इसी तरह हुई थी और वह लड़का अस्पताल में जिंदगी और मौत से जूझता हुआ दम तोड़ गया था। उसके परिजनों और अन्य लोगों ने करीब आठ-दस घंटे तक सड़क पर जाम लगा दिया था। उन्होंने सड़क पर से गुजरने वाली गाड़ियों को रोका भी और कुछ गाड़ियों को तोड़फोड़ भी दिया था। राहगीर बुरी तरह परेशान हो गए थे और कईयों के कई जरूरी काम भी करने से रह गए थे। एक बेचारे बुजुर्ग मरीज को तो बड़ी ही मिन्नत-तरले करके, मरे हुए लड़के का ही वास्ता देकर बड़ी मुश्किल से अस्पताल जाने के लिए रास्ता बनाया गया था। पुलिस भी भीड़ को नियंत्रित करने में नाकाम लग रही थी।

मैं सोच रहा था यदि इस तरह बच्चे तेज रफ्तार से गाड़ियां चलाएंगे और मां-बाप बच्चों को समझाने के बजाय सड़क या रेल यातायात जाम करेंगे तो हर दूसरे दिन जाम ही जाम लगा रहेगा और किसी ना किसी घर का चिराग भी....

विजय कुमार, सह संपादक शुभ तारिका मासिक पत्रिका, अंबाला छावनी-133001

दिलीप कुमार

स्मृति शेष

ये सन 1993 की बात है , मैं नवीं की परीक्षा दे चुका था और मेरे चचेरे भाई विनोद दसवीं में थे। उनका दसवीं का इम्तिहान हो चुका था ,उन्होंने बोर्ड परीक्षा दी थी। वो इस बात को लेकर आश्वस्त थे कि चाहे जो हो जाये वो दसवीं की बोर्ड की परीक्षा पास नहीं कर सकते थे। उनका विश्वास रंग लाया था और वो दसवीं में फेल हो गए थे। आशा के अनुरुप और समय के चलन के अनुसार उनकी व्यापक ठुंकाई घरवालों ने की थी। यद्यपि उन दिनों घर- घर में सचिन तेंदुलकर के चर्चे थे लेकिन फिर भी पढ़ाई ना करने वालों को विलेन ही माना जाता था आजकल की तरह नहीं कि ये पढ़ाई नहीं करता तो ये इनोवेशन या स्टार्ट अप करेगा।

हम दोनों शहर में एक ही गणित के शिक्षक यादव जी से ट्यूशन पढ़ते थे जो इंटर कालेज में हमारे शिक्षक थे ,सो विज्ञान के प्रैक्टिकल के तीस नम्बर के लिये हमें ट्यूशन पढ़ाना उनका जन्मसिद्ध अधिकार था और हमारा नैतिक दायित्व। यादव जी कालेज में गणित के शिक्षक थे ,लेकिन हम दोनों को गणित और विज्ञान का ट्यूशन पढ़ाते थे ,ये और बात थी कि वो कालेज में कभी भी कुछ भी नहीं पढ़ाते थे। उनका और विनोद का छत्तीस का आंकड़ा था ,वो विनोद की कारगुजारियों के पत्र लिखकर मुझे दे दिया करते थे और मैं इसे अपने पापा को ,नतीजा विनोद जो कालेज में दादा और शहर में डॉन बनने के ख्वाब देखा करते थे उन पर तुषारापात हो जाया करते था। उन पर सख्ती बढ़ जाती और उनके दादा टाइप मित्रों से उनको दूर कर दिया जाता था।

दसवीं में उनके फेल होने के बाद उनको गांव भेजने की बातें होने लगीं। ऐसा नहीं था कि वो सिर्फ फेल हुए थे तो उनको गांव भेजे जाने की बात हो रही थी,बल्कि शहर में उनकी संगत बेहद बुरे लड़कों के साथ हो गयी थी। आये दिन चाकू,छुरी, वगैरह उनकी जेब से बरामद होता था। हथगोला वगैरह भी उनकी पहुंच में था ये और बात थी कि वो हथगोला घर नहीं लाते थे ,अपने कट्टे -हथगोले को वो कालेज के कुछ अन्य ऐसे लड़कों के घर रखा करते थे जो सुदूर किसी गांव से शहर में पढ़ने आये थे और बलरामपुर में ही कमरा लेकर रहते थे। इन लड़कों को भी रुचि दादा बनने में ही अधिक थी। खलनायक फ़िल्म उन्हीं दिनों सुपरहिट हुई थी और इंटर कालेज के तमाम लड़के संजय दत्त की तरह बॉडी बनाकर लंबे -लंबे बाल रखने का प्रयास कर रहे थे। गैंगेस्टर बनना ट्रेंड में आ गया था,पढ़ाकू लड़कों का कुछ खास क्रेज उन दिनों उस सरकारी इंटर कालेज में नहीं रह गया था।

विनोद उन दिनों एक टीगे गैंग के संचालन मंडल में से थे। ये गैंग उन लड़कों के पिताओं का था जो अपने बच्चों को पढ़ा लिखाकर डॉक्टर या इंजीनियर बनाना चाहते थे लेकिन इंटर कालेज में आकर वो सब ठाकुर गैंग बनाये बैठे थे। विनोद बचपन से ही पढ़ने लिखने में बेहद कच्चे थे। आठवीं तक उन्हें गांव के सरकारी-प्राइवेट स्कूलों में पढ़ाया गया।उनकी राइटिंग जितनी बढ़िया थी पढ़ाई में वो उतने ही फिसड्डी थे। परिवार के रसूख और फीस की बदौलत वो आठवीं पास हो गए। गांव में शहर सिर्फ उन लड़कों को आगे पढ़ने नहीं भेजा जाता जो आगे पढ़कर ज़िंदगी मे कुछ बनना चाहते हैं बल्कि उन लड़कों को भी भेजा जाता था जिनकी विफलताएं छुपानी हों। विनोद के पिता को उनकी मेधा का अंदाजा पहले ही लग गया था सो विनोद को उन्होंने शहर हमारे पास भेज दिया ताकि उस होनहार बिरवान के चीकने पात गांव वालों को पता ना चले।गांवों में उन दिनों ये आम रिवाज हुआ करता था कि पढ़ाई में फिसड्डी लड़कों को अक्सर शहर भेज दिया जाता था और लगातार उनके पास होने की अफवाह उड़ाई जाती थी ,ये अफवाह तब तक उड़ाई जाती थी जब तक उन लड़कों की शादी नहीं हो जाती थी। शादी होते ही वो लड़के गांव लौट आते थे और फिर पढ़ाई से जुड़ी हर चीज का त्याग करके खेती और पशुपालन में अपना जौहर दिखाने लगते थे।

विनोद के लिये भी ऐसी ही भविष्य की योजना उनके पिताजी तैयार कर रहे थे ,फर्क सिर्फ इतना था कि उन्हें विवाह में रुचि तो थी ,लेकिन उनका पहला प्यार दादागीरी था ,जो उन्हें शहर में करनी थी और सम्भव हुआ तो जिले स्तर पर या इससे कहीं आगे के स्तर पर भी।

विनोद मुझे अपनी दादागीरी के सच्चे -झूठे किस्से सुनाया करते थे जो कि मेरे लिये किसी फंतासी से कम नहीं थे। मुझे अपने माता -पिता और ट्यूशन टीचर की अनुशासन की घुट्टी से बहुत चिढ़ हो गयी थी।मेरी वय के लड़के घरों से खूब जेबखर्च पाते ,वो फिल्में देखते,क्रिकेट खेलते ,लड़कियों को बिना नागा लड़कियों को देखने जाते और काफी मजे करते थे। इसके उलट मुझे कालेज में विज्ञान वर्ग में क्लासेज और प्रैक्टिकल में जूझना पड़ता और शाम को तीन -चार ट्यूशन पढ़ना पड़ता, कालेज-ट्यूशन का काम करते -करते थक कर निढाल हो जाता और सो जाता।

मेरी ज़िंदगी में दो ही दिलचस्प चीजें थीं एक रेडियो -कम -टेप रिकॉर्डर और दूसरे विनोद की अपराध कथाएं जिनके नायक बहुधा वो खुद हुआ करते थे। मेरी ज़िंदगी बेरंग ,बेस्वाद और अनुशासन की घुट्टी से बेनूर हो चली थी। हमें फूटी कौड़ी का भी जेबखर्च नहीं मिलता था ,मांगने पर नजीर दी जाती थी कि

"पैसा पाने पर लड़के पिक्चर देखेंगे और बिगड़ जाएंगे और पैसा होने पर बाहर की चाट-,पकौड़ी खाने से पेट खराब हो जाएगा "।

घरवालों के इस महान उपक्रम से मैं बेहद आजिज़ आ गया था ,उधर विनोद हाई स्कूल में फेल होने के बाद इस बात से काफी डरे हुए थे कि अगर उनकी पढ़ाई छुड़वा कर उन्हें गांव

बुलवा लिया गया तो फिर उनकी दादागीरी और गैंगेस्टर बनने के सपनों का क्या होगा ?

सो एक ही घर में रहने वाले दो दुखी प्राणी मिले ,उन्होंने आपस में अपने आगामी सुखद दिनों को लेकर मन्त्रणा की और घर छोड़कर किसी महानगर की तरफ प्रस्थान करने का निश्चय कर लिया।

हमने अपने सपनों की मंजिल का शहर दिल्ली चुना, क्योंकि अव्वल तो मुंबई बहुत दूर थी और दूसरे वहां रहने ,नहाने -धोने ,शौच आदि की समस्याओं को हमने फिल्मों में देखा था। सो मुंबई का विचार हमने त्याग दिया, दिल्ली ही चुना क्योंकि वहां हमारे गांव के बहुत से लोग रहते थे ,ज्यादा दूर भी नहीं था । फिर विनोद को गैंगेस्टर बनना था ,हीरो नहीं ,सो मुंबई जाने का क्या लाभ ?

हमने एक बैग में अपने कपड़े रख लिये, किराए-भाड़े और रहने की चिंता विनोद के जिम्मे थी उन्होंने मुझे आश्वस्त करते हुए कहा –

“मेरे पास काम भर के पैसे हैं ,दिल्ली में रह रहे गांव वालों के पते हैं ,तुम चिंता मत करो ,बस चल दो ,आगे देखा जाएगा “।

दोपहर में बैग हमने ले जाकर एक दुकान पर रख दिया और कहा-

“ इसमें कपड़े हैं एक रिश्तेदार पांच बजे सामने की सड़क से गुजरेंगे । तब ये बैग हम उनको पकड़ा देंगे ,तब तक रखे रहो”।

दुकानदार मोहल्ले का ही था ,उसने कोई आपत्ति नहीं की। हमारा लक्ष्य वैशाली एक्सप्रेस को पकड़ना था जो कि बड़ी लाइन की ट्रेन थी और दिल्ली तक जाती थी। हमारे ज़िला मुख्यालय गोंडा में हमें वो ट्रेन पकड़नी थी जो हमारे शहर से पैंतालीस किलोमीटर दूर था ।

चार बजे काफी धूप थी ,दोपहर में घर वाले सो रहे थे।मैंने माँ का बक्सा खोला ।उसमें सोने -चांदी के आभूषण,चांदी के सिक्के आदि रखे थे ,सौ और पांच सौ के नोटों की गड्डियों पर थी पर उन सबमें मेरी रुचि नहीं थी । मैं कुछ छोटे नोटों की तलाश में था ,क्योंकि पैसों को लेकर विनोद ने मुझे आश्वस्त कर रखा था। सो मैंने माँ के उस छोटे से पर्स को ढूंढ निकाला जो वो दिन भर प्रयोग किया करती थीं ।उस पर्स में सत्तर रुपये थे ,वो मैंने सारे ले लिये। अचानक मेरी नजर भुजाली पर पड़ी जो कि नेपाल से

मंगवाई गयी थी ,चोरों से सुरक्षा के लिये। इस बड़े चाकू को अगर चोरों से सुरक्षा के लिये मंगवाया गया था तो बक्से में क्यों रखा गया था ,ये मेरी समझ से वैसे ही परे था जैसे जेबखर्च के नाम पर माँ का मुझे फूटी कौड़ी ना देना और दलील देना कि पैसा पाने से लड़के बिगड़ जाते हैं।

भुजाली में मेरी कोई रुचि नहीं थी लेकिन विनोद के दादा बनने में, काम आने वाली वस्तु थी वो बड़ा चाकू। मैंने सोचा विनोद मेरी ज़िंदगी बदलने के लिये इतना कुछ कर रहा है तो मैं भी उसके लिये कुछ कर दूं। सो मैंने वो भुजाली चुपचाप कमर में खोंस ली और उसे शर्ट से छुपा लिया।

“जय बजरंग बली” का सुमिरन करते हुए हमने घर छोड़ दिया । दुकान से बैग लेकर हमने रेलवे स्टेशन की तरफ कूच किया। झाएखण्डी स्टेशन पर पहुंचने पर गोंडा की ट्रेन का इंतजार करने लगे। वहीं पर मैंने गोंडा के दो टिकट लिये और एक घन्टे में ही हम गोंडा स्टेशन पर हाजिर थे।

छोटी लाइन की प्लेटफार्म पार करके हम बड़ी लाइन पर पहुंचे और वैशाली एक्स्प्रेस की दरयाफ्त करने लगे , पता लगा बिहार और उत्तर प्रदेश की सीमा से लगे किसी जगह पर कोई आंदोलन हो रहा है ,जिससे ट्रेन सेवाएं बाधित हैं ,सो शाम को गोंडा आने वाली वैशाली एक्स्प्रेस के सुबह तक आने की संभावना है ।

“दूसरी कोई ट्रेन दिल्ली के लिये अंकल जी “मैंने बहुत नरम स्वर में टिकट काउंटर पर पूछा ?

“ रात को बारह चालीस पर गोरखपुर से एक ट्रेन आएगी “ उतना ही मुलायम स्वर में खिड़की के उस पार से जवाब मिला।

“दो टिकट जनरल के दे दीजिये “मैंने बेतकल्लुफी से कहा।

“फाल्तू हो क्या , लेकिन मैं नहीं। उस ट्रेन के टिकट ग्यारह बजे से पहले नहीं मिलेंगे। चलो निकल लो अभी” खिड़की के उस पार से मुझे घुड़का गया।

इस घुड़की से मैं सिहर गया और थोड़ी दूर पर बैग लिये खड़े विनोद को ये बात बताई।

शाम को छह बजे थे,ग्यारह बजे टिकट मिलना था ,हमारे पास बहुत वक्त था । सोचा बाहर घूम लिया जाए। सो हम शहर की डग्गेमारी पर निकल पड़े।मैंने टिकट के पैसे और अपने भी सारे पैसे विनोद को दे दिए थे ताकि वो उसे महफूज तरीक़े से रख सके।

हमें स्टेशन के अहाते में कुछ जाने -पहचाने

चेहरे दिखे। हमें लगा कि ये लोग हमारे घर वालों को बता देंगे कि हम दिल्ली गए हैं ,तो हम बाद में घर वालों द्वारा पकड़वाए जा सकते हैं। सो हमने अपना नाम और हुलिया बदलने का निश्चय किया। मैंने बैग में से विनोद की पालीथीन खोली और उसमें रखी टोपी लगा ली और चश्मा भी लगा लिया। टोपी मैंने माथे पर काफी आगे खिसका ली थी ताकि चेहरा कम ही दिखे और कोई आसानी से पहचान ना सके।विनोद ने भी गमछा कुछ इस तरह से बांधा कि उसका आधा मुंह ढका रहे और उसे कोई पहचान ना सके।

"हम अपना नाम भी बदल लेते हैं ,ताकि कोई हमें हमारे नाम से ना जान ले "मैंने तजवीज दी, विनोद ने हामी दे दी।

"मेरा नाम अजय सिंह होगा और तुम्हारा विजय सिंह ,बोलो मंजूर है "मैंने विनोद से पूछा?

थोड़ा सोचकर विनोद ने कहा " नहीं मेरा नाम अजय सिंह होगा और तुम्हारा विजय सिंह " उन्होंने अपनी छवि के हिसाब से ये निर्णय दिया ।

मैंने उन्हें चलताऊ नाम सुझाये थे लेकिन अचानक मुझे याद आया कि अजय सिंह उनके ही एक साथी का नाम है जो कि निहायत झगड़ालू और मारपीट करने वाला लड़का है ,सो उन्होंने वो नाम चुन लिया।

हम बेवजह शहर की गलियों की खाक छानते रहे। अचानक विनोद ने एक लेडीज घड़ी निकाली। एचएमटी की घड़ी काफी सुंदर दिख रही थी। विनोद ने कहा –

"इसे बेच दो , मेरे पास ज्यादा पैसा नहीं है।इसी से किराया -भाड़ा निकलेगा " ।

विनोद की बात सुनकर मुझे हैरानी हुई और गुस्सा भी आया कि ये तो बड़ी डींगें मार रहा था कि पैसों की फिक्र ना करो और अभी से ये हाल है।

वो घड़ी लेकर मैं एक घड़ी की दुकान पर गया और मैंने घड़ी बेचने की पेशकश की। मेरी टोपी,चश्मा,अच्छे कपड़े ,रंग -रुप और अंग्रेजी मिश्रित हिंदी से दुकानदार ने इज्जत तो दी लेकिन घड़ी को खरीदने से इनकार कर दिया,उल्टे उसी तरह की घड़ी मुझे तीन सौ में

दिखाने लगा।

बगल में समोसा खा रहे एक सज्जन हमारी व्यापारिक बतकही में शरीक हुए और मुझे जरूरतमंद समझकर वो घड़ी डेढ़ सौ रुपये में उन्होंने खरीद ली। अब मुझे इतना तो समझ में आ ही गया था कि विनोद ने इस घड़ी को लेकर कहीं हाथ की सफाई की है। अचानक मेरा माथा ठनका ,कट्टा और रामपुरी चाकू की बातें करने वाला विनोद चश्मा और टोपी कहाँ से लाया होगा ? ये भी कहीं हाथ की सफाई तो नहीं है।

डेढ़ सौ रुपये मैंने विनोद को लाकर दे दिए और कहा –

"मुझे भूख बहुत लगी है , चलो कहीं होटल में खाना खाते हैं "।

विनोद ने कहा " चलो स्टेशन चलते हैं,फिर देखेंगे "।

दो किलोमीटर की वापसी के सफर में मैं विनोद को उंगलियों से होटल दिखाता रहा और वो आनाकानी करता रहा।

स्टेशन पहुंचकर मैंने विनोद से सख्ती से पैसे मांगे तो उसने मेरे सत्तर रुपयों में बचे पचास रुपये देते हुए कहा –

"ये लो अपने बचे हुए पैसे, इसी में खाना खाओ, दिल्ली का टिकट लो, और जो -जो मर्जी हो करो। मुझसे पैसे मत मांगना, तुम जानो,तुम्हारा काम जाने "।

उसके इस रवैये से मैं बहुत हैरान हुआ और आहत भी। भूख से आंते कुलबुला रही थीं और बुद्धि के पट भी खुल रहे थे। मैंने सोचा पचास रुपये में तो दिल्ली का टिकट भी नहीं आएगा। और किसी तरह दिल्ली पहुँच गए तो वहां कौन मुझे खाना देगा,रहने की जगह देगा ,क्या करूंगा मैं। अभी नवीं तक पढ़ा हूँ मैं। कुछ भी तो नहीं आता। तो क्या करूंगा मैं? मजदूरी करूंगा या होटल पर चाय के गिलास धोऊंगा। मेरे गांव के लोग दिल्ली में ठेला चला रहे हैं या मजदूरी कर रहे हैं ,इसलिये कि वो लोग अनपढ़ हैं ,तो नवीं तक पढ़ना कोई पढ़े -लिखे होना थोड़ी होता है? क्या तकलीफ है मुझे ,क्यों घर छोड़कर जा रहा हूँ मैं। मुझे घर वाले पढ़ने को ही तो कहते हैं ,कोई कमी तो होने नहीं देते। नहीं ना तो मुझे मजदूर बनना है और ना ही गैंगेस्टर। मेरे घर से भागने की कोई वजह नहीं है। सो मैं नहीं भागूंगा।मैं लौट जाऊंगा।घर पर जो मार -पिटाई होगी वो सह लूंगा। लेकिन कल सुबह ज़िंदगी ,दिल्ली में जितनी भयानक होगी ,उससे बेहतर है कि आज घर लौट कर पिट लिया जाए"।

"मैं परदेस नहीं जाऊंगा , ये लो अपने कपड़े ।मैं घर वापस जा रहा हूँ " ये कहकर मैंने बैग से उनकी पालीथीन निकालकर उनको दे दी।

"फिर ये टोपी भी दे दो"विनोद ने तल्खी से

कहा।

मैंने टोपी भी विनोद को लौटा दी। विनोद को मैंने काफी समझाया कि हमें घर लौट जाना चाहिये और ग्रेजुएशन करके की परदेस जाना चाहिये ताकि हमें किसी कम्पनी में कोई अच्छी नौकरी मिल सके। हम सम्पन्न घर के लोग हैं ,हमें पढ़ -लिखकर बाबूजी बनना चाहिए ना कि परदेस जाकर मजदूरी करनी चाहिये।

विनोद ने मुझे अपने फैसले से पलटने के लिये लताड़ा ,कायर ,डरपोक और बुजदिल कहा और अपने फैसले पर अडिग रहते हुए उसने घर वापस लौटने से इनकार कर दिया।

मैंने उसकी फटकार को सह लिया और उसके फैसले का सम्मान करते हुए बड़ी लाइन के प्लेटफॉर्म से छोटी लाइन के प्लेटफार्म नम्बर दस पर आ गया। बलरामपुर की ट्रेन लगी थी लेकिन रवानगी दो घन्टे बाद थी। ना जाने क़तों मेरा मन टिकट लेने का नहीं हुआ और मैं आकर ट्रेन के डिब्बे के निकट खड़ा हो गया।

थोड़ी देर खड़ा रहा ,बिना टिकट था तो डर भी रहा था फिर जाकर प्लेटफार्म की एक बेंच पर बैठ गया। ट्रेन जाने में अभी वक्त था। अचानक एक पुलिस वाला मेरे पास आया और बगल में बैठते हुए बोला "बढ़नी वाली लाइन पर रात की ये अंतिम ट्रेन है क्या "?

"जी, जी अंकल जी , मुझे ज्यादा पता नहीं है "ये कहते हुए मेरा कलेजा मुंह को आ गया। दो वजहों से मैं बहुत बुरी तरह से डर गया ,एक तो मैं बिना टिकट था दूसरे मेरे पास भुजाली थी और पुलिस वाला सटकर बैठा था।

"बेटा तुम मेरा सामान देखो, इसी डिब्बे में बैठ जाएंगे हम दोनों। मैं बाथरूम जा रहा हूँ किसी दूसरी जगह जाना पड़ेगा। इस प्लेटफॉर्म के बाथरूम बहुत गंदे हैं "।

मैंने सहमति में सर हिलाया ,डर के मारे मेरे बोल नहीं फूट पा रहे थे लेकिन मैं अपने डर को चेहरे पर नहीं झलकने देना चाहता था।

पुलिसवाला चला गया, मुझे डर लगा कि ये कहीं मुझे पकड़वा ना दे,उधर से और पुलिस बुला लाये। थोड़ी देर तक मैंने सोचा फिर पूड़ी - सब्ज़ी बेच रहे प्लेटफार्म के वेंडर से मैंने कहा –

"मुझे जाना है ,मेरे परिवार के लोग आगे हैं ,ये पुलिसवाले साहब का सामान है जो अभी यहां

बैठे थे। वो आएं तो उनका बता देना और उनके सामान का ध्यान रखना। मुझे अर्जेट जाना है "।

वेंडर ने सहमति में सिर हिलाया और हंसते हुए बोला " वो आपको सौंप कर गए आप मुझे सौंप कर जा रहे हो ,खैर पुलिस का सामान कौन चोरी करेगा। वो छोड़ कर गए हैं तो वही जिम्मेदार होंगे। वो आएंगे तो जो आपने कहा वही मैं बोल दूंगा ,लेकिन आगे की मेरी कोई जिम्मेदारी नहीं है "।

वेंडर की बातों से मुझे तस्सली तो नहीं मिली लेकिन अपनी हिफाजत भी जरूरी थी और मैं गिरफ्तार तो हर्गिज नहीं होना चाहता था। सो मैं वहां से नौ दो ग्यारह हो गया। पुलिस वाले का सामान ट्रेन के ग्यारहवें डिब्बे के सामने थे और मैं ट्रैन के दूसरे नम्बर के डिब्बे के सामने आकर खड़ा हो गया। ट्रेन के इंजन के आगे अंधेरा था और दूसरे डिब्बे के सामने उस प्लेटफार्म का अंतिम बल्ब जल रहा था। मैं ऐसी जगह खड़ा था कि अगर ओवरब्रिज से वो पुलिस वाला बाकी पुलिसकर्मियों के साथ मुझे गिरफ्तार करने को आये तो मैं दूर से ही उसे देखकर अंधेरे में नौ दो ग्यारह हो सकूं।

ट्रेन में बैठने की मेरी हिम्मत नहीं हुई ,वहीं से मैं तब तक प्लेटफॉर्म पर पुलिसकर्मियों की आमद और अपनी फरारी की जगत पर विचार करता रहा। ये तब तक चलता रहा जब तक ट्रेन ने सरकना शुरू नहीं किया। ट्रेन चलते ही मैं दूसरे डिब्बे में जाकर बैठ गया।

ट्रेन चली तो मैंने चैन की सांस ली , लेकिन थोड़ी देर चलकर ट्रेन फिर रुक गयी। मैं फिर परेशान हो गया कि ऐसा तो नहीं कि उस पुलिसवाले को मेरी भुजाली का पता चल गया हो ,उसी ने जंजीर खींच दी हो और अब हर डिब्बे में मेरी तलाशी हो रही हो।

मैं ये सब सोच ही रहा था कि अचानक विनोद सामने आ गए। उन्हें देखकर पहले तो मैं चौंका,फिर खुश हुआ क्योंकि उनके आने से मुझे थोड़ी हिम्मत भी बंध गयी थी।

“अच्छा हुआ तुम आ गए , चलो लौट चलो, जो होगा घर पर सह लिया जाएगा”मैंने कहा।

“मुझे वापस नहीं जाना है ,अपना चश्मा लेने आया हूँलाओ मेरा चश्मा दे दो ,तुम्हारे जैसे झूठे आदमी के साथ मुझे कोई लेन -देन नहीं रखनी “विनोद ने कड़े स्वर में कहा।

विनोद की तल्ख बात पर मेरा दिमाग भन्ना गया लेकिन अचानक मुझे फिर पुलिसवाला और भुजाली,बिना टिकट की यात्रा और टीसी का डर सताने लगा। बैग छोड़कर मैं ट्रेन के गलियारे में आ गया कि यदि पुलिस या टीसी आता है तो मैं प्लेटफॉर्म की बजाय दूसरी साइड पर उतरकर अंधेरे में गुम हो जाऊंगा,दूसरी तरफ निपट अंधेरा था और कोई गांव का सिवान था शायद।

डरते -डरते मैंने ट्रेन रुकने की वजहों की पड़ताल की तो पता लगा कि ये गोंडा स्टेशन का ही आउटर है और क्रॉसिंग पड़ने की वजह से ट्रेन अक्सर यहाँ रुकती है। कई लोगों से पूछा,वही जवाब मिला लेकिन मैं चौकन्ना था और अंधेरे की तरफ उतर भागने को तैयार था अगर कोई पकड़ने आता है तो ?

देवता -पितरों का सुमिरन करते हुए दस मिनट बीत गए , ये दस मिनट मुझे दस घन्टे से भी अधिक लगे। अन्ततः ट्रेन चली तो मेरी जान में जान आयी।

आधे घन्टे बाद ट्रेन इटियाथोक स्टेशन पर रुकी ,ट्रेन महज दो मिनट यहां पर रुकती थी। मैं फिर सजग होकर प्लेटफॉर्म के विपरीत अंधेरे में उतर जाने को तैयार था कि अगर पुलिस या टीसी आये तो ,बैग मैंने सीट पर ही छोड़ दिया था। बैग लेकर दरवाजे पर खड़ा होता तो लोगों को शक हो जाता।मैं गिरफ्तारी से बचने के लिये बैग गंवाने को तैयार था।

ट्रेन फिर से चली तो मैं अपनी सीट पर आ गया। सामने देखा तो अचंभित रह गया। मुझसे वापस लिये हुए टोपी -चश्मा लगाए विनोद बैठा था। उन्हें देखकर मैं चौंका ,फिर हंस पड़ा तो वो भी मुस्कराने लगे।

हमने रास्ते भर कोई बात नहीं की। विनोद ने आंखे मूंद ली और मैं रास्ते भर खिड़की के बाहर ,गांव,सड़क ,रोशनी और जो कुछ भी देख सकता था ,सब कुछ देखता रहा।

आधे घन्टे में हम झारखंडी स्टेशन पहुंच गए,ये बलरामपुर का वही रेलवे स्टेशन था ,जहाँ से हम अपने सपनों की गठरी लेकर बल्लियों उछलते रवाना हुए थे कुछ घन्टे पहले और अब देर रात अपने मन का बोझ लादे थके कदमों से हम घर लौट रहे थे।

विजय सिनेमा हॉल में नौ से बारह का शो खत्म हुआ था। सड़कों पर चहल -पहल थी। मेरा घर सिनेमा हॉल से कुछ ही दूरी पर था। हम पैदल ही घर पहुंच गए। दस्तक देने के बजाय हमने माहौल का जायजा लेना उचित समझा। हम नीचे दरवाजे पर खड़े थे,गली सुनसान थी। छत पर लोगों की आवाजें साफ आ रही थीं। मम्मी बोलीं –

“आखिर कुछ तो करो , मेरा लड़का तीन से छह की फ़िल्म देखने नहीं जाता तो नौ से बारह फ़िल्म देखने नहीं जायेगा। जाओ खोजो उसे।मेरा दिल बहुत घबरा रहा है “।

“कहाँ खोजूं उसे ,आज तो कुछ हुआ भी नहीं झगड़ा वगैरह तो कहाँ चला गया। आधे घन्टे और इंतजार कर लो ,शायद पिक्चर ही देखने गया हो ,आ जाये। नहीं तो कोतवाली जाऊंगा। सुबह उसके मामा -मौसी के यहां पता लगाऊंगा “।

थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा। मुझे यही वक्त मुफीद लगा। मैंने पुकारा “मम्मी , खोलो दरवाजा “।

“हाँ बेटा आयी “ ये कहते हुए सकेंडों में ही मम्मी ने छत से आकर दरवाजा खोल दिया। पूरा परिवार सामने था। मुझे देखकर माँ की आंखों से जार -जार आंसू बहने लगे। माँ को रोते देखकर मैं बहुत शर्मिंदा हो गया ,विनोद की आंखों से भी आँसू बहने लगे। सभी के चेहरों पर हमारे लौट आने की तसल्ली और खुशी थी। मैंने जब बैग रखा तब घर वाले समझ गए कि ये फ़िल्म देखने का मामला नहीं था बल्कि घर छोड़कर कहीं जाने का मामला था। मैं नल के पास मुंह धोने के बहाने गया और मुंह धोते -धोते वहीं अंधेरे में भुजाली एक ताखे में छिपा दी। भुजाली छिपाने के बाद मुझे लगा कि मैंने अपने पाप बोझ को आधा कर दिया है, क्योंकि अगर मेरे मां -बाप को पता लगता कि उनका ये चार ट्यूशन वाला पढ़ाकू बेटा हथियार लेकर परदेस भाग रहा था तो उन पर क्या बीतती।

आशानुरूप माँ जब हमारे लिये खाना गर्म करने लगीं तब पिता को घर से भागने की क्या ,क्यूँ, कैसे जैसे मुद्दों की पड़ताल करने का मौका मिल गया। हमारे आड़े-तिरछे जवाबों से आजिज आकर उंन्होने हमें बारी -बारी से पीटा और तब तक मुझे और विनोद को पीटते रहे जब तक माँ खाना नहीं ले आयीं।

खाना आते ही हमारी पिटाई बंद हो गयी और हमें खाने के लिये छोड़ दिया गया। हमने भी पिटाई की चोटों और पिछली बातों को भूलकर खाने पर ध्यान केंद्रित किया और भोजन पर टूट पड़े।

खाना खाने के बाद विनोद छत पर पिता के साथ सोने चला गया और मैं नीचे माँ के साथ लेट गया।

सुबह पापा जब छत से बिस्तर लेकर नीचे उतरे तब उन्होंने पूछा –

“विनोद नीचे आया था क्या “?

सभी ने नहीं कहते हुए सिर हिलाया।

“विनोद छत पर नहीं है, नीचे भी नहीं आया। मुझे लगता है वो छत से कूदकर कहीं भाग गया सुबह -सुबह “पापा ने कहा।

“अब कहाँ गया होगा वो और कैसे जायेगा कहीं वो ,क्योंकि उसने ना तो कपड़े लिये हैं और ना ही पैसे हैं उसके पास। उसने अपने सारे पैसे मुझे ही रात को दे दिए थे। फिर कहां गया होगा ये लड़का “माँ ने चिंतित स्वर में कहा।

“गांव गया होगा और कहां जाएगा। किसी की साइकिल मांग कर ले गया होगा। जिसकी ले गया होगा ,वो अभी आएगा अपनी साइकिल मांगने। लौट के बुद्धू घर को ही आएंगे “पापा ने निश्चिन्त स्वर में कहा।

पापा ने ये बात बहुत ही तसल्लीबख्श शब्दों में कही थी मगर माँ के चेहरे पर आश्वासन के भाव ना आये थे।

मैं सोच रहा था कि विनोद फिर क्यों भाग गया। उसे भागना ही था तो गोंडा स्टेशन से लौटा ही क्यों ,और भागकर अब कहाँ गया होगा विनोद “?

(व्यंग्य आलेख)

यूँ तो नजर

यूँ तो नजर कई तरह की होती है जिसके निश्चित प्रकार गिने नहीं जा सकते, पर हाँ आज हम कुछ नजरों के बारें में चर्चा करते हैं। एक नजर से परिचय सर्वप्रथम बचपन में माँ ने कराया, जब हम नयें कपड़े पहनकर घर से बाहर निकलते तो माँ कहती - मेरे कान्हा को किसी की नजर ना लग जाये। पर उस अवस्था में हम नहीं जानते कि ये नजर किस चिड़िया का नाम है। जब कोई मोहल्ले की काकी-ताई सहजता में मेरे सुन्दर कपड़ों के बारें में कुछ कहती तो माँ थूका करती थी जिससे उस नजर का प्रभाव कम पड़ जाए। धीरे-धीरे हम इतने समझदार हो गए कि हम पापा की नजरों से ही ज्ञात कर लेते कि वो गुस्से में हैं या फिर सामान्य। इसके बाद तो तिरछी नजर, पैनी नजर , प्रेम भरी नजरों से समय-समय पर पाला पड़ने लगा।

अब आप इतना ही समझकर संतुष्ट मत हो जाना कि नजर के प्रहार का असर केवल एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य पर ही होता था। नजर तो पशु-पक्षी तक पर असर करती थी। अब केवल नजर का असर बुरा ही होता है ऐसा भी नहीं है, यदा कदा नजर भला भी कर देती है। और व्यक्ति जिस कार्य के बारे में सोच भी नहीं सकता वो काम, ये नजर एक झटके में कर के दिखा देती है। यूँ तो नजर के प्रभाव ने भगवान को भी नहीं छोड़ा। किसी को कहते हुए अवश्य सुना होगा कि आजकल भगवान की नजर हम पर नहीं है या फिर आजकल भगवान हम पर तिरछी नजर करें हुए हैं। नजर पर किसी शायर ने क्या खूब लिखा है-

" नजर से शर कलम कर दे उसे शमशीर कहते हैं
निशाने में जो लग जाये उसी को तीर कहते है "

लिखते-लिखते याद आया कि एक शायर का नाम ही 'नजर' हुआ है उर्दू साहित्य में। वाह नजर तूने साहित्यकार तक को नहीं छोड़ा। लगता इस जमाने में तुझसे कोई बच पाया हो। जब नज़र साहब का खयाल आ ही गया तो फिर उनका भी ये नज़राना स्वीकार कर ही लीजिए-

"नज़र से नज़र को सलाम आ रहे हैं
फिर उनकी तरफ से पयाम आ रहे हैं,,

चलो , नज़र की नज़र तो विशद रही पर सामान्य जन की नजर भी छोटी नहीं होती, उसकी भी नज़र सातों लोकों में कब विचरण करके आ जाती है उसे स्वयं को पता तक नहीं चलता। हाँ, पता भी जब चलता है जब उसका असर दिखने लगता है। पर ये असर अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी।

उपरोक्त नजरें तो आदिकाल से चली आ रही हैं पर कुछ नजर आजकल ज्यादा अपना सिक्का जमायें हुए हैं। जब दो मित्र वर्षों बाद मिलते हैं तो एक दूसरे से सर्व प्रथम ये ही प्रश्न करते हैं अरे, तेरे भी चश्मा लग गया कितने नंबर का है, दूर की नजर का है या पास की नज़र का। ये दूर की नजर, पास की नजर केवल चश्मे के गिलास तक सीमित नहीं रही, अब वह नजर व्यक्ति के स्वभाव के साथ-साथ व्यवहार में भी घुस गई है। समझ गये होंगे अर्थात किसे दूर की नजर से देखना है किसे पास की नजर से। ये स्वयं व्यक्ति ने सोच रखा है। जिसे दूर की नजर से देखना है उसे हम पास की नजर से कैसे देख सकते हैं।

लगता है मन और नजर एक ही माँ के जायें हैं अर्थात दोनों भाई-बहिन हैं। मन अगर एक जगह टिके तो नजर कैसे टिके। दोनों ही चंचल व चितचोर हैं। ऐसा मन के लिए तो पहले ही कहा जा चुका है पर आज से इस श्रेणी में नजर को भी रख दें तो उसके साथ न्याय ही होगा। लगता है कि मेरी भी नजर इस नजर साम्राज्ञी के संपूर्ण साम्राज्य पर शायद ही पहुँच पाई हो, खैर, अब देखते हैं कि आप सबकी पारखी नजर, मेरे इस आलेख पर कैसी रहती है, जय हो नजर महारानी की...

- व्यग्र पाण्डे

कर्मचारी कालोनी, गंगापुर सिटी,
सवाई माधोपुर (राज.) 322201
मोबाइल नंबर- 9549165579

"आवारा धूप"

धूप तो धूप ही होती है
इस कोहरे ठंड से ठिठुरते शहर में
धूप का इंतजार रहता है सबको
कहीं से थोड़ी सी धूप मिले,
सूरज सो गया है कंबल में लिपटकर,
धूप को सुला लेता है,
आगोश में अपनी ,
धूप सो जाती है, सूरज की बाँहो में
नींद के पंखों पर सवार,
प्रणय मिलन के बाद,शिथिल सूरज
अपने सीने में सिर छिपाये धूप को,
धीरे से करता है आजाद,
तो नशीली हो उठती है गुनगुनी धूप,
जिद्दी हो जाती है धूप,
आवारा सी घूमती है धूप,
जहां मन करता है,
वहाँ पसरने लगती है धूप,
जो लोगों के इंतजार को,
खत्म करती है धूप,
आंगन में, बालकनी ,पेड़ फूलों,
गाय, भैंस, कुत्तों पर भी,
बिखरने लगती है धूप,
मतवाली धूप में खेलने लगते है,
बच्चे खरगोश के भी,
पूजा घर में भी खेलती है धूप,
आरती के स्वरों में मिल जाती है धूप,
झोपड़ियों के छोटे-छोटे सुराखों से भी,
छन छन कर आती है सुनहरी धूप,
सुबह-सुबह नहा कर आती,
मां के गीले बालों पर भी फैलने लगती है धूप,
ये धूप चिलचिलाती भी बन जाती है,
नाम मनुष्य ने ही रखे हैं, धूप के,
धूप स्वतंत्र हैं, मालिक है अपनी मर्जी की,
धूप कैद नहीं तुम्हारी मुट्ठी में,
कोई कैद नहीं कर सकता धूप को,
आवारा सी भोली है धूप,
जीवनदायिनी है धूप,
धूप है तो जीवन है।

इन्दु सिन्हा "इन्दु"

पेन्टर : बीती बातें

पहले विज्ञापन आदि के लिये फ्लेक्स नही बल्कि वास्तविक पेन्टिंग की जाती थी। दीवालों पर, दुकानों पर कम्प्यूटर से बने बोर्ड पेन्टिंग नही बल्कि हाथ से बहुत ही कलात्मक तरह से पेन्टिंग के बोर्ड आदि लगे होते थे। शहर भर मे कितने ही पेन्टरों , कलाकारों आदि की दुकाने हुआ करती थीं। उसी बीते हुए समय का एक अनुभव या संस्मरण है।

अपना शहर । शहर के एक मशहूर पेन्टर किसी दीवाल पर एक पेन्टिंग बना रहे हैं मुकद्दर का सिकंदर फिल्म मे अमिताभ बच्चन को मोटरसाइकिल चलाते हुए। शायद किसी मोटर सायकिल कम्पनी का विज्ञापन रहा होगा। अब पेन्टर साहब तो व्यस्त हैं पेन्टिंग मे और सड़क के किनारे 20 -25 लोगों की भीड़ लगी है पेन्टर का हुनर देखने के लिये। भीड़ मे चर्चा भी है " आज शाम तक मोटरसाइकिलिया ही बन पायी , अमितभवा तो कलिहैं बनी , लेकिन बना बहुत गजब का रहा है "। वाह कमाल भाई , गजब !

दिन बीत गया पेन्टिंग पूरी नही हो पायी। दिन भर लोग आते , थोडी देर रुकते , कुछ तो चले जाते पर कुछ थोडी देर और रुक जाते।

दूसरे दिन फिर वैसे ही भीड़ लगती है , कुछ तो वही लोग रहते है और कुछ नये जुड़ जाते हैं। पूरा दिन 20-25 लोग देखते रहते थे और पेन्टिग बनती रहती थी।

कुछ लोग तो चाहे दिन मे एक बार भी घर से बाहर ना निकले हों पर शाम को सिर्फ यही देखने बाजार चले जाते थे की पेन्टिंग कितना और कैसा बना। एक एक बारीकी को लोग बड़े ध्यान से देखते थे।

कुछ लोगों के पास कितना समय रहता था , कुछ स्कूली बच्चे भी रहते थे। फिल्मी अभिनेताओं को देखने का अपना अलग ही क्रेज रहता था वो चाहे किताब मे बने हों या फिर दीवाल पेन्टिंग मे। ये वो दौर था जब कुछ लोग , स्कूली लड़के , दूर देहात से आये लोग और कुछ शहर के लोग भी सिनेमा हाल यूं ही चले जाते थे। पिक्चर ना सही पोस्टर देख के ही आनंदित हो जाते थे। पिक्चर हालों की संख्या किसी शहर के बड़े या छोटा होने का मापदंड हुआ करते थे। लखनऊ , कानपुर , गोरखपुर के किस सिनेमा हाल मे कौन सी फिल्म लगी है ये सब अखबारों मे छपते थे।

आनन्द लेने के लिये , मजा लेने के लिये , मस्त रहने के लिये किसी बड़े चीज़ की करूरत नही पड़ती थी। छोटी छोटी बातों मे ही पूरा मज़ा लेते थे और मस्त रहते थे।

पेन्टिंग बन के तैयार , सब ने तारीफ की। पेन्टर साहब भी खुश । पेन्टिंग इतनी अच्छी और जीवन्त कि लोग आते जाते उसे देखते जरूर थे। लोग पेन्टिंग देखते और जादूई अनुभव करते कि पेन्टिंग मे बने अमिताभ बच्चन या किसी भी मानव चरित्र के पेन्टिंग को किसी भी दिशा या कोने मे खड़े होकर देखिये तो लगता है वो हमे ही देख रहा है।

आज फ्लेक्स है , पुराना समय गया पर जो बात उस जीवन्त और वास्तविक पेन्टिंग मे थी जिसमे एक आम आदमी भी जुड़ जाता था वो बात फ्लेक्स मे नही है।सब कुछ मशीनरी सा लगता है , सब कुछ व्यवसायिक सा लगता है।

पर यही समय परिवर्तन है यही तो विकास है शायद जिसे अंग्रेजी मे डेवलपमेंट या जेनरेशन गैप कहते हैं।

(ब्रजेश श्रीवास्तव)

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

नारी शक्ति को नमन...

नारी के जीवन में, हमें दिखते विभिन्न रंग,
सदैव साथ निभाती, रहकर पुरुष संग-संग।
ममतामयी रूप धरकर, जन्मदात्री माँ बन,
पालनहार माँ प्रेरणा दे, हम जीत लेते जंग।।

बहन बन कर नारी, हमें रक्षा धर्म सिखाती,
संगिनी बनकर जीवन भर, साथ निभाती।
बेटी बनकर कुल का, नाम करती है रोशन,
घर के आँगन को बेटी, फूलों-सा महकाती।।

नारी जीवन का हर रुप लगे सुरभि-सलोना,
नारी से हमारे घर का, सुरभित हो हर कोना।
संस्कार, सभ्यता एवं संस्कृति की नारी पर्याय,
नारी दमक के आगे, फीके लगते चांदी-सोना।।

नारी शक्ति को हम, आंके कदापि नहीं कम,
सर्वत्र अब नारी, दिखा रही अपना दम-खम।
ज्ञान-विज्ञान, साहित्य, राजनीति या खेल हो,
सफल हो रही नारियाँ, स्थितियाँ भले विषम।।

नारी का हमें करना चाहिए, दिल से सम्मान,
श्रम से मुश्किलों को, नारी बना रहीं आसान।
उनके धैर्य, साहस और शक्ति को करूँ नमन,
उन्हें उड़ने के लिए दें, हम पूरा-पूरा आसमान।।

और सब मंगल कुशल है

इक नदी दो कूल हम
एक तुम और एक मैं
साथ हैं, लेकिन नहीं है
साथ केवल एक भ्रम

यह नदी जब भी मुड़ेगी
मोड़ पर अनायास ही
पूछ लोगे हाल मेरा
भूलवश या जानकर

तब कहूँगी जरा थमकर
जहर सारे घूँटकर
पोछकर आँसू जरा सा
मुस्कुरा कर देखकर

यह जन्म ही बोझ केवल
और सब मंगल कुशल है

गर्मियों की दोपहर में
खौलती है जब नदी
जलती हुई रेत से
लिपटे हुए दोनों किनारे

दाह की वेदना से
जन्म देते गान को
भर के जब आलाप
मेरी तरफ तुम देखोगे
मैं सुरों की राख आँखों में भरे
इतना कहूँगी
नीर होना चाहती थी
अब राख हो बहती रहूँगी

यह जन्म ही बोझ केवल
और सब मंगल कुशल है

यह आषाढ़ी दिन उमस के
रातें दम को घोंटती
करवटों पर पीर मन की
स्वप्न में भी टीसती

नींद नदिया के लहर की
धार काली हो गई
स्वप्न क्षारित हो गए सब
प्रीत रस में थे पगे जो

रखी सिल पर मेदिका
और रंग काला पड़ गया
चन्द्रमा सी जिंदगी को
राहु जैसे ग्रस गया

यह जन्म ही बोझ केवल
और सब मंगल कुशल है

साधना मिश्रा

लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली110092

"मै"

निकला था सफ़र मे आईने के
शायद ढूढने खुद मे ही खुद को
हर बार देखता जब भी आईना
कुछ बदला बदला आता नज़र
कुछ लगता सच्चा कुछ झूठा सा
मुद्दत हो गई खुद से मिलकर
चाहत थी मिलने की बरकरार
चेहरा जो दिखाता था आईना
अक्स लगता तो अपना सा था
बाहर से कुछ और नज़र आता
आईना तो झूठ नहीं कहता
फिर कौन है आईने मे दिखता
हैरान था कहाँ हूँ कौन हूँ मैं
शायद गुम हुआ आपधापी मे
हिम्मत न हारी इस सफर मे
करता रहा प्रयास मुझे पाने की
मिल न पाया मुझे वो जो मैं था
खोया जिसमे शायद मेरा मैं था।

सौरभ "जयंत"

लघुकथा

आसमाँ तले

अबकी गाँव प्रवास में स्निग्धा के शरीर पर फोड़े-फुंसियाँ निकल आईं। चिंतित दादी आयुर्वेदिक इलाज के लिए नीम की निंबोलियाँ इकट्ठे करने गाँव की चौपाल वाले नीम के पेड़ की ओर चल पड़ीं।

"शांत, सुंदर गाँव है, दादी! यहीं रह जाऊँ, क्या?"

"तेरी मैनेजमेंट की पढ़ाई कौन पूरी करेगा, मैं?" दादी बोलीं।

दोनों बतियाते गाँव के चौपाल पर पहुँचे जहाँ प्राइमरी स्कूल के बच्चे बोरा बिछाए, शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। नीम तले मास्टर जी की बाबा आदम के जमाने की कुर्सी एवं उसके तने पर ब्लैकबोर्ड टँगा था। छाया सीमित थी तो बच्चे कुछ छाया में और कुछ धूप में बैठे थे।

"मास्टर जी! खुले आसमान के नीचे बच्चे कैसे पढ़ते हैं! छुटपन में आई थी तो स्कूल पास वाले भवन में लगता था न?" प्रश्न जुबान तक आ ही गया।

"भवन! वह तो एक आधी-अधूरी सी इमारत है।"

"है तो मास्टर साहब! पर इस ओर खुलने वाला दरवाजा बंद है, क्यों?"

"दबंगों ने कब्जा कर इधर से ईंटें जोड़ दी हैं। उल्टी दिशा से निकास रख, गाय-भैंसों का तबेला बना दिया है। दूध का व्यवसाय है उनका।"

"आपने उन्हें रोका नहीं?"

"मैं शिक्षक के चोले में फिल्मी हीरो नहीं हूँ न बिटिया कि उन्हें भगा सकूँ। लिखित शिकायत की तो गायब करवा देंगें मुझे। मुफ्त में दूध, दही तथा दुग्ध व्यवसाय में से आमद का तय हिस्सा पहुँचता है तो पुलिस ही क्यों, मुखिया-सरपंच भी चुप ही रहते हैं।"

"मैं बड़ों से मशवरा कर संबंधित अधिकारी को चिट्ठियाँ लिखूँगी। स्वयंसेवी संस्था वालों की मदद भी ली जा सकती है..।"

"यहाँ के झंझटों से दूर रह, शहर जाकर कॉलेज की पढ़ाई में रम जाये, तेरे लिए वही अच्छा होगा", आँचल में निंबोलियाँ समेटे दादी बातचीत सुनकर थक चुकी थीं, "कलियुग में जिसकी लाठी, उसी की भैंस। आमजन बस मूकदर्शक..।"

नीना सिन्हा

दोहे

विष का प्याला धर अधर, मीरा गाये गीत।
नहीं असर तो जग मिले, असर हुआ तो मीत।।

जब भी मांगा मिल गया, मुझे तुम्हारा साथ।
और भला क्या मांगते, रब से मेरे हाथ।।

दुख में तेरा आसरा, सुख में तेरी छाँव।
तुम से बल पाकर बढ़ें, राम हमारे पाँव।।

दिल पत्थर के हो गए, नित खा-खा कर चोट।
कठिन हो गयी दर्द को, अब शब्दों की ओट।।

सच्चाई है जीभ पर, दिल में है ईमान।
कपट कभी करता नहीं, गैरतमंद इंसान।।

कविता कब से देखती, कविवर तेरी राह।
उसे तुम्हारे बोध की, रही सदा से चाह।।

खिले चमन के बीच भी, मनुआ खड़ा उदास।
मेरी खुशियों की रहे, चाबी उसके पास।।

रहे ढूंढते सब यहाँ, अपने दिल का चैन।
दुनिया को दीखे नहीं, मेरे भीगे नैन।।

ये दुनिया वैसी नहीं, जैसी दिखे हुजूर।
उसकी पाग उछाल दे, जिसका नहीं कसूर।।

टूट रहे थे हौसले, डगमग थे जब पाँव।
ले आया था प्रेम तब, आशाओं के गाँव।।

मैं पहुंचा उस दर्द तक, जो था बिन उपचार।
रख आया ले पीड़ मैं, खुशियाँ वहाँ अपार।।

आशा खत्री 'लता'
2527, सेक्टर 1, रोहतक 124001

कॉल बेल

रामानुज अनुज

द्वार में लगी कॉल बेल से संगीत मय आग्रह कहें या निर्देश कहें....'चल छइयां छइयां छइयां छइयां' का मधुर संगीत बज उठा था या साफ-साफ सरलता से यूँ कहा जाये कि रमन बाबू के घर की घण्टी बज गई तो ज्यादा समझ की बात होगी।

रमन बाबू इस समय घर मे अकेले थे। घर में ही क्या दुनिया से भी अकेले थे। पत्नी के निधन के बाद कोई आगे पीछे नहीं था। व्यवहारिक तौर पर यह कहना गलत होगा, दो बेटे तीन बेटियां, बहू, दामाद नाती सब तो है, एक कागज में सबका नाम लिखने लगे तो एक दर्जन तो नाम हो ही जायेंगे, लेकिन ये रिस्ते गिनती के लिये हैं। भला हो गिनती की खोज करने वालों का अन्यथा बहुत बड़ी समस्या पैदा हो जाती। कैसे बता सकते थे कि तीन बेटे और तीन बेटियां है। घर से चीजें चोरी हो जातीं और हम बता न पाते कि कितनी चवन्नी चोर जी ले गये हैं। वो भी बेचारा हिसाब न लगा पाता कि कितने का माल उड़ाया है। पूरा का पूरा हिसाब किताब गड़बड़ा जाता। चारों तरफ हिसाबी संकट पैदा हो जाता सबसे बड़ी समस्या सरकारी कामकाज में आती। किसी माई के लाल में दम नहीं होता कि बता पाता कि हमें कितनी तनख्वाह मिली है, कितनी खैरात मिली है और कितनी मिलनी बाकी है?

जय हो गिनती मैया की आपकी ही कृपा से मास्साब ने पढ़ाया था...'बच्चों राक्षस किंग रावण साहब से दस सिर थे। सहस्त्रबाहु की हज़ार भुजाएँ थी और दुर्गा मैया के पास आठ भुजाएँ थीं।' खैर ये बहुत गम्भीर विषय है इस उम्र में इस तरह का तर्क-कुतर्क यमपुरी के गेट नम्बर फाइव तक घसीट सकता है।

रमन बाबू भीतर से दरवाज़े की कुंडी मारकर चेहरे में उगी सफेद घासों में सफेद झाग लगा रहे थे, दाढ़ी सफाई यंत्र में तो पहले से ही ब्लेड फँसा रखे थे। अक्सर हफ्ते भर इसी तरह वह बेचारी फँसी रहती थी, जब तक उसमें थोड़ी बहुत जान होती थी। कॉल बेल फिर से गा उठी.....'चल छइयां.....छइयां....'

'साला, क्या जमाना आ गया है, शुकून से दाढ़ी भी चिकनी नही कर सकते है। इन नये फैशन के बच्चों को क्या कहें---मना किया था कॉल बेल मत लगवाओ पर माने नहीं, लगवा दिया 'चल छइयां-छइयां...और उड़ गए विदेशी जमीन पर। अब इस उमर में क्या 'छइयां-छइयां और क्या पइयाँ-पइयां।' पुराना जमाना होता तो गांव का नाई उस्तरा लेकर घुस आता और अधिकार से कहता, 'बाबू साहब, मोरे पेटवा मा लात मत मारो। रिटायरी के बाद का पेंशन कम पड़त है कि मोर धंधा हथियाबय लगे।' उस्तरे की धार देखकर हम उसे शायद यह न समझा पाते, 'भाई! सिर्फ अपनी ही दाढ़ी साफ कर रहा हूँ, धंधा करने का अभी इरादा नहीं है।' रमन बाबू बड़बड़ाने लगे।

इस बार कॉल बेल नहीं बजी। लकड़ी का दरवाजा स्वयं बजा, शायद आगन्तुक ने दरवाजे पर पद-प्रहार या मुष्टिका-प्रहार किया था, कह नहीं सकता? जोरदार गुहार थी दरवाजे की, 'भइया जल्दी बाहर निकलो, ये कमबख्त मुझ बेजान की छाती में चोट कर रहा है।'

मामले की गम्भीरता को समझ कर वे सफेद झाग चेहरे में पोते हुये ही दरवाजा खोल दिये। सामने एक बीस बाइस साल का एक लड़का खड़ा था। उसने सफेद फ़टी कमीज पर काले रंग का जीन्स का पैंट खोंस रखा था। काला रंग होने से पैंट में जमा मैल की परत तो छिप गई थी। लेकिन आती हुई दुर्गंध का वो भला क्या इलाज करे? कहाँ से तंदुरुस्ती बनाने की साबुन 'लाइफ बॉय' या तन-मन महकाने वाली 'लक्स' सोप लाये। ये तो निरा देहाती लगता है, जो गोबर और मिट्टी की गंध नथुनों में भरकर शहर की हवा दूषित करने चला आया है। वे लड़के को देखते ही भड़क उठे और कड़क कर बोले, (कड़क कर क्यों न बोले रिटायर्ड पुलिस ऑफिसर है, ले देकर कड़कना भर तो बचा है, सो कड़कते रहते हैं)

'क्या इतनी भी सब्र नही है कि दाढ़ी चिकनी कर लेने देते? ये तो गनीमत रही कि बड़े घर के बड़े कमरे में नही था, अन्यथा.....खैर छोड़ो ये बातें तुम जैसे अनपढ़ गंवार क्या जाने? बताओ कौन हो तुम? सबेरे-सबेरे बैल की तरह मुँह उठाये मेरा द्वार कचरने क्यों आ धमके?' रमन बाबू एक सांस में बिना अर्धविराम के बोल गये।

वह लड़का कुछ नहीं बोला, नीची नज़र किये खड़ा रहा, शायद वह रमन बाबू का सफेद चेहरा

देखकर डर गया था।

'बोलते क्यों नही? मुझे इस तरह परेशान करने का मतलब जानते हो, पुराना पुलिस वाला हूं लॉकअप में ठूँसवा दूँगा।' रमन बाबू आवाज़ में और तेजी लाते हुए बोले।

'साहब जी! सरपंचिन काकी नहीं रहीं।' वह धीरे से बोला।

'क्या ??'

'हां साहब, हफ्ता भर पहले लकवा ने झटका मारा था, पूरा शरीर अकड़ गया था, गर्दन टेढ़ी हो गई थी, बीती रात चल बसीं।'

'वो जिंदा रही तब भी अकड़ी रही, लकवा लगा तब भी अकड़ी रही, मरने पर भी अकड़ी होगी। परंतु ये तो बताये नही कि तुम हो कौन? तुम्हे किसने भेजा?'

'साहब, मैं।मातादीन कोटवार का लड़का हूँ। ददुआ ने आपको खबर करने को भेजा है।'

'ओके--ओके, आई अंडर स्टैंड। अब तू फूट इधर से---भेजा गरम मत कर।'

रमन बाबू उर्फ रमन प्रताप सिंह रिटायर्ड पुलिस इंस्पेक्टर ने भड़ाक से दरवाजे बंद कर लिए थे।

वे सोचने लगे---'इसी सरपंचिन की बजह से तो गांव छूटा, घर छूटा, जन्म भूमि छूटी, अब चली गई न, घर-द्वार, जमीन,जायदाद सब गठरी में बांधकर, भइया के सरपंची का पर्चा दाखिल करते ही ये भाभी से सरपंचिन हो गई थी। क्या हम उधर कब्ज़ा जमाने को गांव जाते थे। अपना तो विचार केवल ये था कि सामने दो कमरे पक्के करा दें। आये-गये बैठने-उठने लायक हो जाते, निस्तार तो आख़िर इन्ही लोगो का होता, लेकिन का कहें? भैंस से भी कमतर उसकी समझ को। उसे लगा, पुलिस वाला है पूरा का पूरा घर हथिया जाएगा। हुँह मुझे सभी पुलिस वालों की तरह समझ लिया था। उसकी बात पर भैया भी आ गये। हाथ मे डंडा उठा लिए थे मेरे लिये। जरा भी आगे पीछे विचार नही किये, अरे भई! हम ठहरे पुलिस वाले, अपनी जुवान कुत्ते के दुम की तरह सीधी नही हो सकती, इतनी समझ तो उन्हें तो होनी चाहिये कि रमन दिल का बुरा नही है, भले मुँह से घर मे आग लगाने की बात बोल जाये पर लगाता तो कभी नही।'

वे मुँह में सेविंग क्रीम लगाये हुए कमरे में इधर -उधर फिरते हुये बड़बड़ा रहे थे। उनकी सुनने वाला वहाँ कोई नही था, सिवाय सर पर कंक्रीट की छत का बोझ उठाये स्वेत-श्याम दीवारों के। वे चलते चलते बेड रूम में आ गये जहाँ दुनाली बंदूक के बगल में स्वर्गीय ठकुराइन की फोटो टँगी थी। उनकी मृत्यु के बाद तस्वीर और बंदूक एक ही दिन एक ही समय मे दीवार में लगा दिये थे।

वे तस्वीर से मुखातिब हुए, 'ठकुराइन, तुम्हारी चिमटा वाली सरपंचिन जेठानी स्वर्गीय हो गई। याद है न तुम्हारी लचकदार कमर में कस कर चिमटा मारा था। पता है चोट तुमने खाई पीड़ा मुझे हुई। अभी-अभी चौकीदार का लड़का खबर दे कर गया है। भैया बोले होंगे कि छोटे को खबर कर आओ। वरना दो कौड़ी के चौकीदार की क्या हिम्मत के मुझे बुलाने भेजे। दस बीस मर जाते थे, तब तो हम पहुँचते नही थे। हम कहीं नहीं जाने वाले, उनसे हमारा नाता उसी दिन टूट गया था जिस दिन उन्होंने मुझे मारने के लिए हाथ मे डंडा उठा लिया था।'

'आपको जाना चाहिये।' तस्वीर से आवाज़ आयी।

'ये-ये-कौन बोला? आवाज तो ठकुराइन की है। हुँह, मरा आदमी क्या बोलेगा, हरगिज नही, जिंदा तो बोलता नही, मुर्दा क्या बोलेगा? कल रात लगता है कुछ ज्यादा चढ़ा ली है, उसी का असर है।

तस्वीर से पुनः आवाज निकली, 'ठाकुर साहब, आप जाइये, भाभी की मौत हुई है। अंतिम संस्कार में जाइये, भले ही मन मे मलाल है, कारण भी मुझे ज्ञात है लेकिन समाज के लिये, परम्परा के निर्वाह के लिये जाइये। एक दिन आपको भी चार कंधों की जरूरत होगी।'

वे तस्वीर के सामने हाथ जोड़े दो मिनट बुत बने खड़े रहे, तभी कॉल बेल बजी, 'चल छइयां - छइयां.....'

'दरवाजा खुला है।' रमन बाबू कमरे से ही चिल्लाये।इस बार भीतर आने वाली उनके घर मे काम करने वाली बाई थी। तीखे-नाकनक्स की, वाचाल, रमन बाबू से आधे उमर की, ठकुराइन की मौत के बाद से काम कर रही है, झाड़ू पोछा वर्तन से लेकर खाना बनाने तक का सारा काम गुलाबो ही देख रही थी। शुरू-शुरू में जब ये आयी थी तब पड़ोसियों के लिये किसी धांसू फ़िल्म की तरह थी। हर कोई रमन बाबू के घर चोरी छिपे झांकने की कोशिश में रहा था।

'क्या बनाऊं साब।' रहस्यमयी मुस्कान फेंकती हुई वह बोली।

'मेरा सर।'

गुस्से से उबलते हुये रमन बाबू बोल तो गये फिर भूल का अहसास हुआ। वे मनाने की गरज से पुनः बोले, 'सॉरी गुलाबो, तुम्हें अकारण डांट दिया।दरअसल आज मेरी सरपंचिन भाभी मर गई है। जरा माइंड डिस्टर्ब है, आज तुम जाओ।'

गुलाबो चली गई थी, लेकिन उसकी समझ मे ये नही आया कि रमन बाबू की हमेशा दबी रहने वाली बायीं आंख, आज खुली हुई क्यों है। इनकी भाभी मर गई है तो मुझे क्यों फटकार रहे हैं?

उसके जाने के बाद वे धम्म से पलंग के सिरहाने बैठ गये और तस्वीर की ओर मुँह करके बोले, 'ठकुराइन मुझे माफ़ कर दो। तुम्हारे जाने के बाद मैं बेसहारा हो गया था। यदि ये गुलाबों न होती तो मै जाने कब का मर गया होता। तुम्हारे जाने के बाद मैंने जाना कि पुरुष नारी बिना जीवित नही रह सकता है उसे जन्म से लेकर अंतिम सांस तक नारी की जरूरत होती है। भैया का दुःख मेरी समझ मे आ गया है, मै उनके दुःख में शरीक होने जा रहा हूँ। रमन बाबू के कदम बाहर की ओर बढ़ गये थे। गम्भीर मुख मुद्रा वाली ठकुराइन की तस्वीर में भी मुस्कुराहट आ गई थी।

रीवा मध्यप्रदेश

गीत

अन्धकार के आह्वाहन पर दौड़ लगाते
तारे देखे
..... कितने रूप तुम्हारे देखे

क्षिप्त चित्त की तमस भूमि पर
एकाग्र चित्त का सम्मेलन
उत्कर्ष हृदय के वेगों पर
अधिकार जताता उन्मन मन

हर्षित मन के घर आंगन में,कुंठा के रंग
सारे देखे
....कितने रूप तुम्हारे देखे

व्योम धरा के अनुबंधों के
सारे नियम विलक्षण पाए
दृष्टि हुई है इतनी धुंधली
कोई भेद समझ न आए

अंधियारों का भेद छुपाते , दुपहर के
उजियारे देखे
.....कितने रूप तुम्हारे देखे

महाग्रंथ के अध्येता भी
देखे हैं मैंने अतिवादी
लघु जीवन का विश्लेषण कर
कितने संत बने उन्मादी

पारिजात वृक्षों के नीचे , मंत्र विजेता
हारे देखे
.....कितने रूप तुम्हारे देखे

शिवकुमार बिलगरामी

: 1:

सुबह सुहानी ज़िन्दगी, संध्या है आराम
दुख सुख में समभाव रख, निबटा ले सब काम
निबटा ले सब काम, कमा ले खूब रुपैया
बुरे वक़्त में किसी का मुँह मत तकना भैया
कहे जैन कविराय, सीख जो तूने मानी
जीवन में हर दिन होगी तब सुबह सुहानी।

: 2 :

गारा रखकर चाक पर, डंडा दिया घुमाय
माटी सनी ये उंगलियां, मूरत रही बनाय
मूरत रही बनाय, साथ में घड़ा सुराही
शीतल जल को पीकर प्यास बुझाते राही
कहे जैन कविराय यह शिल्पी कभी न हारा
पाले है परिवार ये चिकनी मिट्टी-गारा

: 3:

आया ओमिक्रा ॅन अब करने को संहार
सम्भलो इससे पूर्व कि कर न दे प्रहार
कर न दे प्रहार निरंतर सजग रहें सब
लापरवाह जो हुए दिखायेगा ये करतब
कहे जैन कविराय सभी का चैन उड़ाया
रूप बदलकर ओमिक्रा ॅन चुपके से आया

: 4 :

बिस्तर पर जाकर लगे, करने को आराम
मन में लेकिन चाह है, घूमूं चारों धाम
घूमूं चारों धाम लुटा दूँ सारी दौलत
दीन दुखी खुश होवें तो आ जाए राहत
कहे जैन कविराय कि मन रह जाए खिलकर
जागे सेवा भाव सुहावे ना तब बिस्तर।

: 5 :

दीपक धरा मुंडेर पर फैल गया परकाश
अंधियारा छिपने लगा मन में जागी आस
मन में जागी आस खिली नयनों में ज्योति
सागर बीच सीप में जैसे हँसता मोती
कहे जैन कविराय चहुंदिश चकमक चकमक
तुझको बारम्बार नमन है नन्हे दीपक।

: 6 ::

मन में गर विश्वास हो पूरे होंगे काम
टूटे मन से गर किये तो होंगे नाकाम
तो होंगे नाकाम रहेगी आस अधूरी
जीवन जीना बन जायेगा इक मजबूरी
कहे जैन कविराय रहे न कमी जतन में
मैं जीतूंगा- यही फैसला कर लो मन में।

: 7 :

बिस्तर पर जाकर लगे, करने को आराम
मन में लेकिन चाह है, घूमूं चारों धाम
घूमूं चारों धाम लुटा दूँ सारी दौलत
दीन दुखी खुश होवें तो आ जाए राहत
कहे जैन कविराय कि मन रह जाए खिलकर
जागे सेवा भाव सुहावे ना तब बिस्तर।

: 8 :

दीपक धरा मुंडेर पर फैल गया परकाश
अंधियारा छिपने लगा मन में जागी आस
मन में जागी आस खिली नयनों में
ज्योति
सागर बीच सीप में जैसे हँसता मोती
कहे जैन कविराय चहुंदिश चकमक चकमक
तुझको बारम्बार नमन है नन्हे दीपक।

: 9 :

मन में गर विश्वास हो पूरे होंगे काम
टूटे मन से गर किये तो होंगे नाकाम
तो होंगे नाकाम रहेगी आस अधूरी
जीवन जीना बन जायेगा इक मजबूरी
कहे जैन कविराय रहे न कमी जतन में
मैं जीतूंगा- यही फैसला कर लो मन में।

अशोक जैन

शिवानंद सिंह की रचनाएँ

1.

पाला बदले लोग

ठौर-ठिकाने गए और
फिर पाला बदले लोग |

अपने आशय की नदियों में,
धँसकर खूब नहाए,
लूटपाट के 'कोल्डक्रीम' से,
मुखड़े भी चमकाए,
मंदिर-मंदिर गए और
फिर जाला बदले लोग |

रामायण जनता के मन का
नहीं पढ़े, पढ़वाए,
गुरुद्वारों, मंदिर-मस्जिद में,
चादर, फल चढ़वाए,
झोंपड़ियों तक गए और
फिर ढाला बदले लोग |

लोकतंत्र के गरिमाओं की,
बहुत उड़ाई धज्जी,
बन साधारण, सात्विकता की,
बहुत लपेटी सज्जी,
'दाना-पानी' भरा और
फिर ताला बदले लोग |

पहुँच गए जब जन-संसद तक,
तब अपनी पर आए,
अपने चाल-चलन, चर्चों को,
राजमार्ग तक लाए,
बदले घर-परिवार और
फिर आला बदले लोग |

(जाला- पानी रखने का बड़ा बरतन
आला- ताखा, औजार)

2.

खैनी लिए किसान

लहरों का हर तट से होता,
प्रति-दिन मधुर मिलान |

मिलिंग मशीनों में कतता है,
बटा हुआ धागा,
घर की ओरी पर आ जाता,
सुबह-शाम कागा,
खेतों से मिलता-जुलता है,
खैनी लिए किसान |

घटनाओं का विस्तृत वर्णन,
करती है कविता,
किरणों का होता है दर्पण,
उगा हुआ सविता,
गेहूँ चक्की में पिसता है,
बनता सूक्ष्म पिसान |

राम-राम करता फूलों से,
पहरों का काँटा,
मन की दीवारों ने आखिर,
हर आँगन बाँटा,
रातों के अँधियारों में है,
छिपता नया बिहान |

वाक्यों के अक्षर-अक्षर की
सीमा, पूर्ण-विराम,
तद्भव तत्सम शब्दों का भी
मेलजोल अभिराम,
विविध विधाओं की संसद का,
संवृत विधिक विधान |

3.

बाप-बेटे अलग हैं

रह गए आँकड़े सब
धरे के धरे,
तप रही दोपहर है
तवा की तरह |

कष्ट देने लगा है
समय का सहन,
बेकहा हो गई है
तनावी कहन,
आपसी मंत्रणा की
हुई है कमी,
लड़ रहा है कथन भी
लवा की तरह |

कैनवासों पे छाया
हुआ है कपट,
कुछ धुआँ उठ रहा, उठ
रही कुछ लपट,
आँधियों से हुआ है
गगन धुंधमय,
लू उबलती मिली है,
रवा की तरह |

भकभकाना पराली
का, कम न हुआ,
बंद होते न दिखते,
न रम, न जुआ,
व्याकरण जिंदगी का,
बदल सा गया,
विष खुराकी हुआ है,
दवा की तरह |

कुछ बची ही नहीं है,
धरा में नमी,
गीत में हो चुकी है,
परा की कमी,

एकता अब घरों की
हवा हो गई,
बाप-बेटे अलग हैं,
जवा की तरह |

4.

छोटे दानोंवाले गेहूँ
भीषण गरमी खूब पड़ रही,
तेज धूप, पर
आएँगें हम गाँव ! किसी दिन |

तापमान चालिस के ऊपर
सूरज जलता है,
दोपहरी में लू का झोंका
पंखा झलता है,
आबहवा में ज़हर भरा है,
पिता दुखी, पर
छूएँगे हम पाँव ! किसी दिन |

छोटे दानोंवाले गेहूँ
होंगे खेतों में,
खेल रहे होंगे तब बच्चे
गड्ढे, रेतों में,
कार्यालय भी खुला हुआ है,
काम अधिक, पर
खेलेंगे हम दाँव ! किसी दिन |

पशुओं का आवारापन कुछ
पहले से कम हो,
ऐसा भी हो अमलतास-सा
हँसता मौसम हो,
यह भी संभव हो सकता है,
घर न मिले, पर
पाएँगे हम ठाँव ! किसी दिन |

गुज़र रही होंगी गरीबियाँ
अविदित संकट से,
जूझ रही होगी मानवता
झगड़ा-झंझट से,
बात हमारी लगे अरुचिकर,
क्षमा करें, पर
ढूँढ़ेंगे हम छाँव ! किसी दिन |

5.

ट्रेन में हैं
कह रहे हैं,
चल दिए हैं,
ट्रेन में हैं,
किंतु गाड़ी लेट है तो,
आज आने से रहे |
पहुँचते ही, शहर में है,
एक जलसा, वहाँ जाना,
कार्यक्रम के, पूर्ण होते,
है व्यवस्था, वहीं खाना,
व्यस्तता है,
काम ज़्यादा,
फेर में हैं,
शीघ्र आने के लिए, पर
समय पाने से रहे |

गरमियों में, धूप का है,
यह पवन भी, घट-तपेला,
सब सदाशिव, जानकर भी,
पालता है, हर झमेला,
जल नहीं है,
बादलों में,
धरा उबली,
पंछियों के ठोर असहज,
नीड़ छाने से रहे |

क्या कहें हम, राम जाने,
है नहीं अब, घर पुछैया,
पुलिस-थाना, कोटिश: दुख,
चाहते हैं, सब रुपैया,
ज्वर बहुत है,
पाँव सूजे,
आँत उतरी,
रुग्ण खटिया पर पड़े हैं,
अन्न खाने से रहे |

तुम बताओ ! क्या करें हम !!
पास सब कुछ, पड़े लाले,
लटकते हैं, कुछ दिनों से,
एक घर में, कई ताले,
कष्ट में हैं,
है न कोई,
दुर्दशा है,
जहाँ वंचित है प्रतिष्ठा,
गाँव जाने से रहे |

6.

लू का भुट्टा

सड़क किनारे ठंडा पानी
पिला रहा है तून |

तोड़ गए दम ताल-तलैए
नहरें सूखी हैं,
चाँपाकल है प्यासा-प्यासा
नदियाँ रूखी हैं,
जला अँगीठी लू का भुट्टा
धूप रही है भून |

गर्म हवा से तंग हुआ है
घर का एनामेल,
रोटी के सँग बहा पसीना
रहा कबड्डी खेल,
चौथा माह साल का झुलसा
जल जाएगा जून |

हुए उड़नछू प्राण, पेड़ से
लटक रहा है तन,
भूल चुका आचार-संहिता
श्वेत हठीला घन,
चींटी लेकर भाग रही है
पिसा कनक का चून |

कान लगाकर सुनतीं सब कुछ
सागर की लहरें,
लस्सी पी गुनगुना रही हैं
गज़लों की बहरें,
सूरज की तपती किरणों ने
सुखा दिया है खून |

शिवानन्द सिंह 'सहयोगी'

'शिवाभा' ए-233, गंगानगर
मेरठ- 250001 उ.प्र.
संपर्क- 9412212255

दो सहेलियों की व्यथा कथा

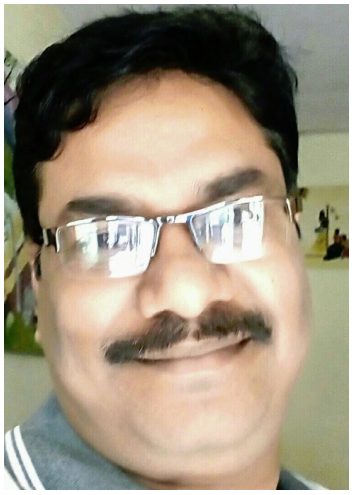

राजेश सिंह

मुझे तो लगता है
दो सहेलियां मिलती ही इसलिए है
कि जी भरके ....
अपने अपने... पति की बुराई...कर सकें
और अपना जी हल्का कर सकें

एक ने कहा.....
ऐसा करमजला है
चार बार बोलो तो एक बार सुनता है
जैसे कान में लाठी डाले बैठा हो

केला बोलो तो करेला ला देता है
परवल मंगाओ तो कुंदरु ले आता है
वो भी सडा सडा

दूसरी बोली.....
अरे तुम्हारा तो सुन भी लेता हैं
यहां तो चिल्लाते रहो
मजाल है साहब के कान पर जूं रेंग जाये
सिर्फ हां.. हूं... करता रहता है
जैसे मुंह में जुबान ही न हो

तेरा वाला
सब्जी मंगाने पर
कम से कम सब्जी ही ले आता है
मेरे वाले का तो पूछो ही मत

परसों हमने कहा
आफिस से आते समय लौकी लेते आना
आज रायता खाने का मन है
साहब उधर से लाक और की लेकर आ गये
तबसे हम पर्ची लिख के देते है
जाने क्या ला के धर दें महाशय

पहली...
मत पूछो... सालों हो गये पिक्चर देखे
कहता है अब देखने लायक बनती कहां है
रामायण की सीडी ला दिया है
कहता है प्रभु भजन करो
यही करना था तो फिर
शादी काहें किये थे

रोटी बेलत बेलत कमर झुकी जात है
मजाल है कभी कहा हो
आज बाहर खाने चलते हैं
सड़ियल महाकंजूस....

दूसरी...
अरे मेरा वाला तो बाहर खिलाने के नाम पर
खुदै खाना बनाना शुरु कर देता है
कल पड़ोसन देख के बोली
भाभीजी आपको तो बड़ा आराम है
भाईसाहब खाना बना रहें है

आराम हुंह...खाली बेलन भर हाथ में था
बाक़ी मरना तो मुझे ही है

साल भर हो गया न सूट न साड़ी
जब कहो -कहता है
अलमारी तो भरी पड़ी है

हिरोईन जन्मदिन कब मनाती है याद रहता है
बस मेरा ही याद नहीं रहता
इस बार फिर भूल गया
मन करता है सोंटा लेके सूत दें

अरे करम फूट गया
ऐसे लीचड़ मनई से शादी करके
जो हमका पता होत तो
हम ब्याह करते का- ई जंगरचोर से

अच्छा चलते हैं....
आने का वक्त हो गया है
आते ही कहेगा एक कप चाय पिला दो
फ्री की नौकरानी जो रखी है घर में

मेरा वाला भी आता ही होगा
कहेगा बहुत काम था आफिस में
बुरी तरह तक गया हूं थोड़ा पैर दबा दो
मन करता है दो लात धर दूं....

तृप्ति मिश्रा

मैं भारत की बेटी हूँ

मैं भारत की बेटी हूँ
क्यों न मैं अभिमान करूँ
रजकण जिसके चंदन हैं
नतमस्तक मैं गुणगान करूँ

आर्यवर्तों की श्रेष्ठ भूमि है
सुरवन्दन सब करते हैं
रामकृष्ण की पावन भूमि
नित अभिनन्दन करते हैं
उतुंग शिखर हिमगिरि सा
उन्नत भाल हमारा है
वारिद जिसके चरण पखारे
सौंदर्य अद्भुत प्यारा है
वेद ऋचाओं की रुनझुन से
होता मन आनन्दित है
हवन कुण्ड के धुएँ से
दसों दिशाएं सुरभित हैं
पुण्य भूमि है भरत भूमि यह
जिसका मैं यशगान करूँ

मैं भारत की बेटी हूँ
क्यों न मैं अभिमान करूँ

विंध्याचल है कमर मेखला
सतपुड़ा से शृंगार हुआ
गंगा जमना जिसे सींचती
रेवा तट विस्तार हुआ
ज्ञानदीप हुआ प्रज्ज्वलित
देश मेरा दिनमान रहा
एक अलौकिक युगदृष्टा
आदर्शों का प्रतिमान रहा
संस्कृतियों का पलना अद्भुत
सर्वधर्म की वेणी है
जय हिंद के जयकारे लगते
राष्ट्र भक्ति की त्रिवेणी है
जन गण मन मंत्र है
जिसका मैं रसपान करूँ

मैं भारत की बेटी हूँ
क्यों न मैं अभिमान करूँ

पराक्रमी वीरांगनाएं
यहाँ इतिहास बनाती हैं
दुर्गावती और लक्ष्मीबाई
यहाँ पूजी जाती हैं
तुलसी मीरा कबीर देखो
अमर पदों को बुनते हैं
महाराणा पृथ्वीराज जी
वीर कथाएं गुनते हैं
साल हजारों से सुसंस्कृत
है अपना इतिहास यहाँ
इतनी उन्नत तकनीकें
ब्रह्मांड में थी और कहाँ
अद्भुत है संस्कृति मेरी
जिसका मैं सम्मान करूँ

मैं भारत की बेटी हूँ
क्यों न मैं अभिमान करूँ

निशानेबाज़ मानवी का शौक़ ही बना उसका जुनून

आकलैंड विद्यालय शिमला में कक्षा 6ठी की विद्यार्थी रही थी उस समय जब मानवी सूद ने शिमला स्थित इंदिरा गांधी खेल परिसर में पहला कदम रखा था और वह भी तायकोंडो मार्शल आर्ट सीखने के लिए। कुछ दिन इस विधा में अभ्यास के बाद उसके मन में खेलों में ही कुछ अलग करने की चाह पनपने लगी।इसी उत्सुकतावश वह खेल-परिसर में ही अन्य खेलों को दूर से देखने परखने लगी। धीरे-धीरे वहाँ अन्य बच्चों को शूटिंग रेंज में अभ्यास करते देखकर इस खेल के प्रति आकर्षित हुई और वहीं एक अच्छा निशानेबाज बनने का सपना बुना। उन्होंने अच्छी तरह सोच-समझकर एयर रायफल प्रतियोगिता को चुना तथा वह मात्र 11 वर्ष की आयु में हीनिशानेबाजी प्रतियोगिता में भाग लेने भी लग गयी थी। इस उभरती प्रतिभावान खिलाड़ी का जन्म 4फ़रवरी 2006 को हिमाचल प्रदेश राज्य की राजधानी शिमला में एक व्यवसायी परिवार में हुआ था।परिवार भी इस खेल के प्रति आगे बढ़ने के लिए मानवी को पूरा सहयोग देने के प्रति दृढ़ संकल्प है। उनके पिता राजीव सूद व माँ अर्चना सूद दोनों का ही विश्वास है कि वैसे भी लड़कियाँ स्वभाव से मेहनती,कमिटेड व फलेक्सिबल लर्नर के साथ साथ उनमें एकाग्रता का स्तर भी ज़्यादा होता है उनमें अपेक्षाकृत अधिक धैर्य होता है जिसकी वजह से उनके अंदर एक स्थिरता बनी रहती है। संभवतः यही गुण मछली की आँख भेदने अर्थात् लक्ष्य-संधान करने में सर्वोपरि माना जाता है। मानवी सूद पहली बार उस समय राज्य खेल परिदृश्य पर चर्चा में आइ जब वर्ष 2018में अंडर 15 एन आर कटेगरी में ज़िला स्तरीय स्पर्धा में उन्होंने 10 मी राइफल प्रतियोगिता में स्वर्ण पदक जीता था। इस प्रतियोगिता में कुल 400 पोईंट के लिए 40 शॉट लगाने निर्धारित थे। इसमें मानवी ने 351 पोईंट हासिल कर गोल्ड पर क़ब्ज़ा किया था। मानवी का मानना है कि निशानेबाज़ी एक प्रतिस्पर्धात्मक किंतु बेहद रोमांचक खेल है।इस खेल का शौक़ ही उसका धीरे धीरे जुनून बंनने की ओर अग्रसर है।प्रायः यही जुनून किसी खिलाड़ी को सफलता के शिखर तक पहुँचाता भी है गत वर्ष नवम्बर माह में भोपाल में आयोजित 64 वीं राष्ट्रीय शूटिंग चैंपियनशिप प्रतियोगिता में हिमाचल प्रदेश का प्रतिनिधित्व कर चुकी हैं और वह चौथी अंतरराष्ट्रीय शूटिंग प्रतियोगिता में भारतीय टीम के चयन के लिए भारतीय राष्ट्रीय राइफल संघ द्वारा आयोजित चयन ट्रायल के लिए भी क्वालिफ़ाइड है।अक्टूबर 2021 में, देहरादून में पहली स्नाइपर शूटिंग चैंपियनशिप के दौरान "चैंपियन ऑफ द चैंपियन" का खिताब भी मानवी द्वारा जीता गया है।

चन्द्रकान्त पाराशर, शिमला हिल्स

माँ

जब भी याद आती है -

माँ!

मैं एक छोटा सा बच्चा बन जाता हूँ

और खुद बखुद पलने मे झ

झूलने लग जाता हूँ

माँ!

तुम अन्धेरे के खिलाफ थी

और मैं धुपप अन्धेरे मे ही लौटता था

पिता का रोष और पत्नी की फटकार झेलते हुए

दरवाजा खोलने की घर में

सबको मनाही थी

लेकिन तुम

रगों मे खून की तरह दौड पडती थी

और मेरी सपनीली आखों मे

फैले आसमान की चमक को बखूबी से पढ़ लेती थी

तुम जानती थी

मुझे गुनगुनी धूप और फाल्गुनी हवा बहुत पसन्द है

तुम्हे यह भी मालूम था

सरसों के पीले खेत

और गेहूं चने की बालिया

मुझे बहुत गुदगुदाती है

मैंने तुम्हे बताया था कि असखय बच्चो की मौत

और उनमे डूबी कवितायें पढ़कर

मैं प्राय उदास हो जाता हूँ

माँ तुम मेरे लिये बहुत जगी

माँ तुम मेरे लिये बहुत खटी

मगर माँ तुम मेरे लिये कभी नहीं थकी

सर्द हवाओं को धूप की तेजी के साथ बांधना

तुमने मुझे सिखाया था

तुम्हारे बोये सफेद फूल

अब पीले पड़ चुके हैं

मुझे मालूम है माँ!

अब तुम कभी नहीं लौटोगी

बचपन के सारे रंग बिखर गये हैं

पिता मुझमे और मैं पिता मे

माँ तुमको ढूंढ़ताहूँ

हवा की चुप्पी बढ़ गयी है

दिन भी दबे पाँव घर मे घुसता है

उठने-बैठने के तौर तरीके भी

बदल गये हैं

स्मृति की गन्ध लिये

दरवाजे की ओट से

हवा की दस्तक पर

पिताजी अब भी

तुम्हारा नाम पढ़ते हैं

और मनहीं मन सुबकते है

तुम्हारे बिना

मैं भी अभिशप्त---निर् गन्ध

माँ तुम्हे लौटना होगा

मेरी कविताओं मे

मेरी कमजोर पड़ती रगों मे

अगली पीढी को खुशहाल बनाने के लिये

मिट्टी मे दबे इस बीज को

अंकुरित करने के लिये

तमाम दूँरियां पार करके अपने विश्वास - संबल की गन्ध मे तुम्हे ढूंढूंगा-

तुम्हारी करूणा भरी रूह को टोह कर - सहला कर....

मैं खुद की उडान भर लूँगा

जया रावत